❀ श्री सद्गुरुचरणकमलेभ्यो नमः ❀

॥ श्री कनक भवन विहारिणी विहारिणे नमः ॥

॥ श्रीमते मारुतनन्दनाय नमः ॥

॥ श्रीमत्यै चन्द्रकलायैनमः ॥ श्रीमत्यै चारुशीलायैनमः॥

'सर्वेश्वरी श्री चन्द्रकला-तत्त्व-दर्शन'

लेखकः—

दिव्य दम्पति प्रिया-प्रीतम भगवान श्री सीतारामजी
के सतत अष्टयामीय सेवा परायण परमैकान्तिक
रसिक प्रवर श्री हनुमन्निवास--निवासी
अनन्त श्री रामकिशोरशरण (कोठे-
वाले बाबा) कृपाकटाक्षाश्रित

'श्याम--वल्लभा शरण'

प्रकाशकः—

श्री जनक दुलारीशरण

श्री राम महल, कटरा।

श्री अयोध्या जी

प्रथम संस्करण ५००] [संवत् २०२०

मुद्रकः—श्रीहनुमत् प्रेस, श्री अयोध्या जी।

अनुक्रमणिका:—

भूमिका।

प्रथम अध्याय—सर्वेश्वरी जिज्ञासा।

द्वितीय अध्याय—वन्दना।

तृतीय अध्याय—शास्त्रों और आचार्य वचनों में सर्वेश्वरी-
श्री चन्द्रकला तत्त्व।

चतुर्थ अध्याय—सर्वेश्वरी श्री चन्द्रकला जी की प्रधान सेवा
—वीना वादन।

पंचम अध्याय—निमिवंश में प्राकट्य।

षष्टम अध्याय—सर्वेश्वरी श्री चन्द्रकला जी और महा-
महिम श्री भरतलाल जी की अभिन्नता।

परिशिष्ट भाग।

॥ सर्वेश्वर्य्यै श्रीचन्द्रकलायै नमः ॥

❋ धन्यवाद के दो शब्द ❋

समाज का संकल्प हुआ कि सर्वेश्वरी-तत्त्व प्रतिपादक प्रमाणों का संग्रह ग्रन्थ के रूप में हो। समाज के संकल्प ने मेरी भावना को भी प्रेरित किया। सर्व श्री पूज्य चरण वर्तमान श्री लक्ष्मण कोटाधीश, श्रीहनुमन्निवासाधीश, श्रीहनुमत सदनाधीश, श्री सियानाथ शरणजी, श्री लक्ष्मणशरणजी, श्री शत्रुहन शरण जी आदि संतों के उत्साह ने मुझ जैसे सर्वथा अयोग्य व्यक्ति में भी ऐसे गम्भीर कार्य के लिये साहस भर दिया और श्री सद्गुरु भगवान की असीम अनुकम्पा से इन गुरुजनों की कृपा 'प्रस्तुत ग्रन्थ' के रूप में साकार हुई। ग्रन्थ के प्रकाशन में ये सब गुरुजन विशेष सहायक हैं:—

१—श्री १०८ श्री सीतारामशरणजी (महंथ श्रीलक्ष्मण किला)
२—श्री १०८ श्री रघुनन्दशरणजी (महंथ श्रीहनुमत निवास)
३—श्री १०८ श्री सियारघुनाथशरणजी (महंथ श्रीहनुमतसदन)
४—श्री १०८ श्री सियानाथ शरणजी (महंथ श्रीसद्गुरु-पुरुषोत्तम भवन)
५—श्री १०८ श्रीराम सखी जी।
६— ,, श्रीरामगोविन्दशरणजी (म० विदेहजा दुल्लहनिकुञ्ज)
७— ,, श्रीराम मनोहर शरण जी।
८— ,, श्री जानकीशरण जी (म० बधाई भवन)
९— ,, श्री रमई बाबा (म० हनुमत विहार कुञ्ज)
१०— ,, श्री लक्ष्मणशरणजी [श्रीहनुमत निवास छोटामंदिर]
११— ,, श्रीसियारघुनाथ शरणजी [म०श्रीजानकीरमणकुञ्ज]
१२— ,, श्री अवध विहारीशरणजी [पुजारी, हरे मंदिर]

१३— „ श्री दिव्यकला जी [म० श्री दिव्यकला कुञ्ज]
१४— „ श्री [युगल सरकार के मुनीम] मोहन बाबू [नेपाली कोठी]
१५— „ श्री वैदेही वल्लभशरण [म० हनुमान टेकरी]
१६— „ श्री रामसजीवन शरणजी [म० श्रीमिथिला कुंज]
१७— „ प्रोफेसर विश्वम्भर दयाल [श्री भरतशरण जी]
१८— „ श्री कमलाशरणजी [लक्ष्मण किला]
१९— „ श्री रामजानकी शरणजी [ऋणमोचन घाट]
आदि ।

एतदर्थ इन सबों को सतशः धन्यवाद देने की धृष्टता है। श्री १०८ श्री लक्ष्मण शरण जी [श्रीहनुमत निवास] बराबर से सर्वेश्वरी तत्त्व के अन्वेषण में रहे हैं, इसलिये इस ग्रन्थ में इनसे अधिक सहायता मिली है तथा श्री १०८ श्री शत्रुहन-शरण जी ने सर्वेश्वरीजू के स्मरणके बहाने इस ग्रन्थकी भूमिका लिखने की कृपा की है, जिसके लिए इन दोनों सन्तों को धन्य-वाद देने की ढिठाई करता हूँ।

ग्रन्थ की उपादेयता सर्वेश्वरी विषयक होने से जानेंगे और त्रुटियों को मेरी अधिक अयोग्यता जान क्षमा करेंगे, जो मुझ जैसे सर्वथा अयोग्य व्यक्ति से सम्भव ही है और क्षमा भी आप गुरूजनों से सम्भव ही है। मेरा अपना इसमें कुछ है भी नहीं। प्राचीन ग्रन्थों के और आचार्यों के प्रमाणों का संग्रह ही तो है।

आप सब संतों का चरणरेणुः—

लेखक--श्याम वल्लभा शरण

❀ श्रीजानकी वल्लभो विजयते ❀

❀ भूमिका ❀

'सब ते सो दुर्लभ सुरराया। राम भगति रत गत मद माया ॥'

परम प्रेमास्पद श्रीजानकी रमण जू की प्रेमामृत-रस-रूपा भक्ति को सर्वाधिक सुदुर्लभ इसलिये बताया गया कि:—

"ये कल्प कोटि सततं जप होम योगै ध्यानैः समाधिभिरहोरत ब्रह्मज्ञानात्। ते देवि धन्य मनुजा हृदि बाह्य शुद्धा भक्तिस्तदा भवति तेष्वपि राम पादौ ॥"

श्रीमहारामायण में त्रिभुवन गुरु भगवान शंकरजी श्रद्धास्वरूपिणी श्रीगिरितनन्दनीजी से कहते हैं कि साधक कल्प कल्पांतर पर्यन्त जप होमादिक कर्मकांड में निरन्तर संलग्न रहे; तदुपरान्त ध्यान धारणा समाधि द्वारा योगाभ्यास में लगे, तत्पश्चात् ब्रह्मज्ञान में निमग्न रहे, तब कहीं उस मुमुक्षु का बहिरन्तःकरण विशुद्ध होता है। ऐसे लोक वासना शून्य पवित्र हृदय क्षेत्र में ही श्रीमैथिली प्राणवल्लभजू के महामधुर पादारविन्द में मंगलमयी भक्ति अंकुरित होती है।

भक्त वत्सल भगवान जानकी-जीवनजू के कृपाविधान के अनुसार उस सत्पात्र सज्जन को श्रीसीतारामोपासक दयालु चित्त विशुद्ध संतों का सौभाग्य वर्द्धक समागम प्राप्त होता है। ऐसे सत्संग-सुधा से अभिसिंचित होकर उसकी भक्ति-शोभा कालान्तर में क्रमिक-विकाश शैली से एक लहलहाती हुई भक्ति

कल्पलता का आकार धारण कर लेती है जिसमें 'हरिपद रति रस' पूर्ण मनोहर सुस्वादु फल लगने लगते हैं।

सन्त भगवन्त सद्गुरु कृपाभाजन भक्त-हृदय में भगवत्प्रेम की उत्तरोत्तर उच्च से उच्चतर स्थिति होती जाती है। अपने प्रियतम श्रीरघुवंश विभूषणजू के त्रैलोक्य मोहन सौन्दर्य माधुर्य एवं हृदयग्राही दिव्य गुणगणों की कथा श्रवण करने से सर्व प्रथम उसके हृदय में 'रति' संज्ञक प्रेम प्रगट होता है। 'प्रेम' परिपक्व होने पर कोटि कोटि विघ्नों के सम्मुख भी उसका मन प्रेम मार्ग से मुरने को नहीं। प्रेम से बढ़कर 'स्नेह' का दर्जा है। स्नेही की चित्तवृत्ति द्रवीभूत होकर अपने प्रिय की ओर प्रवाहित होती रहती है। 'घृत स्नेह' में तदीयत्व होता है अर्थात् मैं उन्हीं का हूं। 'मधु स्नेह' में मदीयत्व अर्थात् प्यारे मेरे हैं। स्नेह के उत्कर्ष होने पर प्रेम की 'मान' नामक भूमिका आती है। इस अवस्था के उदय होने पर प्रेमी अपने हानि-लाभ के विचार से अन्ध होकर अपने प्रिय में निःशंक प्रेमासक्त हो जाता है। उसके बाद आता है 'प्रणय'। इस अवस्था में तन, मन, प्राण--सर्वत्र एक ही प्रेम भावना समाविष्ट हो जाती है। तब 'राग' की बारी आती है। तब प्रिय के संयोग में दुःख भी सुख तथा उनके वियोग में सुख भी दुःख रूप भासता है। अन्त में 'अनुराग' आता है। अनुरागी हृदय में नित्य नई नई प्रीति प्रगट होती रहती है। प्रेम के इस स्तर तक शांत, दास्य, वात्सल्य और सख्य रस निष्ठ

उपासक भी पहुँच सकते हैं। परन्तु इसके आगे प्रेम की जा सर्वोच्च अवस्थाएँ महाभाव, मोहन, मोदन और मादन संज्ञाएँ वाली हैं उनमें प्रवेश तो श्रृङ्गार भावना से ही संभवहै।

"प्रेमा परा तु सर्वत्र प्रौढ़ा शृंगार गोचरा।"

मधुर रति सम्पन्ना, तत्सुख-प्रधान-हृदया श्रीमिथिलेश राजनन्दिनीजू की सहचरी को यदि कोटि कोटि ब्रह्माण्डों का सुख भी एकत्र मिल जाय तो अपने युगल प्राणधन के सुख के लेश मात्र पर उसे न्यौछावर कर डालती है और उन प्रिय को दुःख की लेश मात्र सम्भावना पर अपने शरीर में सर्प विच्छू के दंश से भी कोटि गुणा यंत्रणा अनुभव करती है।

ऐसे उत्कृष्ट प्रेम-मार्ग पर चलना क्या हँसी खेल है?

"चढ़िके मैन तुरंग पर, चलिवो पावक माहि।
प्रेम पंथ ऐसो कठिन, सब कोउ निवहत नाहि॥"

तभी तो रसिकाचार्य वर्य अनंत श्रीअग्रस्वामीजी महाराज कहते हैं—

"नहीं अग्र अस संत के, सर लायक जग माँहि।
रस शृंगार अनूप है, तुलबे को कोउ नाहिं॥
तुलबे को कोउ नाहिं, सोई अधिकारी जग में।
कांचन कामिनि देखि, हलाहल जानत तन में॥
यावत जग के भोग रोग, सम त्यागेउ द्वंदा।
पिय प्यारी रस सिंधु मगन नित रहत अनंदा॥"

जरा सा महाराज श्रीभगवत रसिकजी की सूक्ति भी सुनते चलिये:—

"भगवत श्यामा श्याम को, पावक रूप विहार।
नहिं समर्थ खगराज की, करत चकोर अहार॥
करत चकोर अहार, किल किला जलचर लावै।
स्याह सीख मृगराज, वदन ते आमिष पावै॥
ऐसे रसिक अनन्य, और सब जानहु खगवत।
तजौ पराई सैन्य, भजहु बित माफिक भगवत॥"

देखा न आपने ? कैसी टेढ़ी खोर है, रसिकाई के असि धारा व्रत पर चलना ? आप यही न कहेंगे कि अपने पुरुषार्थ बल पर अगम है, परन्तु हमारे वांछा कल्पतरु उदार चूड़ामणि प्यारे इष्ट की कृपा के आगे सुगम है हमारे लिये। सो तो ठीक है। आप शांत, दास्य, वात्सल्य और सख्य रस की भावना उनसे सुगमता पूर्वक पा सकेंगे, परन्तु शृँगार रस प्रदान करना श्रीप्रियतमजू के कर कंज में भी नहीं है।

विहार देश में स्वाधीन भर्तृका श्रीजनकनन्दिनीजू का एकाधिपत्य है। यहां तो 'हमारे माई जनकललीजू को राज।' प्राण प्यारे रघुराज दुलारे आपके कर कंज की कठपुतली हैं। आपको इस कथन में विश्वास नहीं हो तो मधुररसाचार्य श्रीस्वामी बालअलीजी से पूछ लीजिये। शृँगार भावना सिद्धि के लिये श्रीअवध रामघाट पर श्रीप्रियतमजू से इस बात की याचना की तो क्या उत्तर मिला ? श्रीरसिक प्रकाश भक्त-माल के पूज्य टीकाकार के शब्दों में सुनिये:-

"पूरण विधान हेत रामघाट आये इष्ट दरसन पाये शुचि सेवा रुचि भई है। बोले रघुनाथ श्रीकिशोरीजू के हाथ यह जेती रसरीति सब अली भाव मई है॥ रूप सों छपायो उर विरह सतायो तब प्रगटी लड़ैती छवि हेरी कृपा भई है। भयो मन भायो बाल अली नाम पायो उर अति सुख छायो सब स्वामी रीति लई है॥"

और श्रीरघुनन्दन हृदय हारिणी श्रीजनक नन्दिनीजू ने अपनी ओर से अपनी परम प्रेष्ठा सखी सर्वेश्वरी श्रीचन्द्र-कलाजू को रहस्य भंडारिणी बनाकर उन्हें रहस्य भावना वितरण करने का पूर्ण अधिकार सौंप दिया है।

'रहस्य भंडारिणि सर्वदायिके प्रिय प्रियायाश्च प्रसाददे शुभे॥'

(श्रीलोमश संहिता अ० २१। ७०)

अतः युगल विहार देश में प्रवेश पाने के लिये सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजू की कृपा अनिवार्य रूप से अपेक्षणीय है। भक्ति तत्त्व के मर्मज्ञ श्रीव्यास वाल्मीकिजी के भी परमाचार्य भगवान नारदजी के मुखारविन्द से सच्ची सच्ची बात सुन लीजिये। आप सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजू से कहते हैं:-

"तव प्रसादात् बिनैव साधनैः प्रलभ्य जीवो हि प्रियस्य संगमम्। रहस्य लीलादि शुभाधिकारी भवेद्विनायास मयत्नतश्च॥"

(लो० सं०। अ० २१। ७१)

दास्य रस के सर्व प्रधान आचार्य श्रीहनुमंतलालजी हैं, सख्य रस वालों के मुखेन्द्र हैं श्रीलखनलालजी, वैसे ही शृँगार

रस की सर्व प्रधानाचार्या सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजू हैं। आपकी कृपा के बिना कोई भी मधुरोपासक श्रीकनक भवन विहारिणी विहारीजू को जो आचार्य मर्यादा के प्रतिपालक हैं, कैसे रिझा सकता है ?

'तव प्रसादेन बिना रघुत्तमो न मैथिली चापि प्रसीदति ध्रुवम्'

अब आपही सोचिये, ऐसी परमाचार्या श्रीसर्वेश्वरीजू के परत्व का परिज्ञान हमारे लिये कैसा परमावश्यक है ? यद्यपि हमारे श्रीअवध के शृँगाररस साहित्य में आपके परत्व परिचायक प्रसंग स्थल स्थल पर भरे हैं, फिर भी इनके एकत्र संकलन की आवश्यकता थी, जिससे रस साहित्य के अल्प अनुशीलन वाले प्रारम्भिक साधक भी अपनी परम हित कारिणी परमाचार्याजू को तत्त्वतः जान लेवें।

हर्ष की बात है कि प्रस्तुत सद्ग्रन्थ **'सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकला तत्त्व दर्शन'** नामक संग्रहात्मक चंपू प्रबंध लिखकर रस-मर्मज्ञ श्रद्धेय लेखक ने रसिक समाज के एक महान अभाव की पूर्ति की है।

इस प्रबंध में जैसे आगम प्रमाणों का संकलन है वैसे ही रसिकाचार्यों की दिव्य महावाणियों का। हमारे प्रातः स्मरणीय पूर्ववर्त्ती रसिकाचार्यों ने भी ध्यानावस्था में श्रीलड़ैती लाड़िले जू के दिव्य विहार लीलाओं का साक्षात्कार कियाहै। आप वन्दनीय गुरुजनों की समाधि भाषा में लिखित प्रसाद काव्य की महावाणी को हमारे आचार्याभिमानी रसिक वृन्द बड़ी श्रद्धा से महाप्रमाण मानते हैं।

माननीय लेखक महोदय ने परिशिष्ट सहित छै अध्यायों में इस स्तुत्य सद्ग्रन्थ की रचना की है। पहले श्रीसर्वेश्वरी तत्त्व की जिज्ञासा हुई है, फिर श्रीसर्वेश्वरीजू के वन्दनात्मक उद्धरणों का संकलन है। तत्पश्चात् श्रीसर्वेश्वरी तत्त्व का प्रतिपादन अकाट्य प्रमाणों के द्वारा किया है। आपने उभय प्रमाणों के द्वारा यह सिद्ध किया है कि सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकला जू की श्रीयुगल प्राण सर्वस्व जू के लिये प्रधान सेवा वीणा वादन ही है। श्रीलड़ैतीजूकी भांति निमिवंश में प्रगट होकर सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजू ने भी निमिकुल को गौरवान्वित किया है, यह बात भी आपके उद्धृत प्रमाणों से सिद्ध होती है। अन्तिम अध्याय में आपके उद्धृत प्रमाणों से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकला जू ने ही श्रीभरतलाल जू का मंगलमय विग्रह धारण करके श्रीयुगल किशोरजू के प्रति निष्काम प्रेम का ऐसा उच्चतम आदर्श उपस्थित किया कि सभी अयोध्या वासियों के मुक्तकंठ से यह उद्गार निकल पड़ा कि:-

'भरतहिं कहहिं सराहि सराही। राम प्रेम मूरति तनु आही॥'

बलिहारी !

परिशिष्ट भाग में वंदनीय रसिकाचार्यों की दिव्य महावाणियों का सुललित संग्रह है।

यद्यपि इस दिशा में और भी अनुसंधान वांछनीय है, फिर भी परिश्रमी लेखक ने जो कुछ संग्रह प्रस्तुत किया है, रसिक समाज के द्वारा श्लाघ्य है।

एक बात मार्के की है कि यह कार्य परमाराध्य नित्य परिकरों की सत्सम्मति से हुआ है। अपनी परम प्यारी सखी श्रीचन्द्रकलाजू की परत्व चर्चा श्रीरघुनन्दन प्राण वल्लभा श्रीमैथिलीजूको अधिक रुचतीहै। अतः आपने अपने चरणाश्रित श्रीश्याम वल्लभाशरणजी के हृदय में प्रेरणा प्रदान कर उन्हें लेखक बनाया। श्रीलखनलालजू ने अपने शरणापन्न मान्यवर श्रीलक्ष्मणशरणजी के द्वारा विषय वस्तु संकलन में लेखक की मदद करवायी है। देखिये न, मेरे शरण्य श्रीशत्रुघ्न कुमार को। मेरे जैसे अल्पज्ञ से भूमिका लिखवा रहे हैं। सबसे बड़ा श्रेय है श्रीचन्द्रकला सुयश के परमानुरागी श्रीहनुमन्तलालजू को जो अपने हनुमत् प्रेस में छपवा कर इस सद्ग्रंथ को प्रकाश में ला रहे हैं। महामहिम सिंधु वत गंभीर श्रीभरतलालजू मौन हैं। बड़े लोग अपनी प्रशंसा नहीं चाहते।

इससे हमारा पूर्ण विश्वास है कि यह ग्रन्थ रत्न रसिक समाज में यथेष्ट समादृत होगा।

रसिकजनों का लघु अनुचर

विनीत-शत्रुघ्न शरण।

(बिरौली वाले)

प्रथम-अध्याय।

सर्वेश्वरी जिज्ञासा।

सर्व विदित है कि वेदान्त वेद्य परतत्त्व ब्रह्म की प्राप्ति ही मानव मात्र का परम पुरुषार्थ है।

पुरुषान्न परं किञ्चित सा काष्ठा सा परा गतिः।

आदि वेदवाक्य परब्रह्म पुरुषोत्तम को ही परम प्राप्य प्रतिपादन करते हैं। प्राणि मात्र अनन्त रस चाहता है। आनन्द ही आनन्द की खोज में रहता है और अनन्त रसस्वरूप परमात्मा ही हैं। उसी को पाकर जीवात्मा परमानन्द को प्राप्त करता है। यथा—

"रसो वैसः रसंह्येवायं लब्ध्वाऽऽनन्दी भवति॥"

सत्‌चित आनन्द कंद ब्रह्म की प्राप्ति के लिये क्रमशः कर्म योग, ज्ञान योग और भक्ति योग है, किन्तु आनन्द की अनुभूति तो केवल भक्ति से ही सम्भव है और भक्ति के द्वारा ही पूर्ण रूपेण उसे जान सकते हैं। यथा--

"भक्त्या मामभि जानाति।"

अब भक्ति रस की अभिव्यक्ति के लिये दास्य, सख्य, वात्सल्य तथा और भी रसों के होते हुए भी इसकी पूर्ण अभिव्यक्ति मधुर रस में ही शास्त्र सिद्ध है। साहित्यकारों की भी

यही सम्मति है कि रस शब्द की मुख्य वृत्ति शृँगार में ही है। वीर करुणा आदि में तो औपचारिक (गौण) है।

"रस शब्दोहि शृङ्गारे मुख्य वृत्तितया स्थितः।
अन्यत्र स भवेद् गौणः परिभाषा विवर्जितः॥"

अथवा यह कह सकते हैं कि मधुर रसामृत सागर में अन्य रस विलीन रहते हैं, इसीलिये मधुररस को प्राचीन एवं अर्वाचीन महापुरुषों ने रसराज कहा है। शृँगार रसराज है। इसमें भक्ति और सेवा के सम्पूर्ण अंग प्रस्फुटित रहते हैं। किसी भी रस के द्वारा ब्रह्मोपासना के लिये आचार्य की शरणागति नितान्त आवश्यक ही नहीं अनिवार्य्य है। अन्यथा जीवात्मा परमात्मा का पूर्ण रूपेण मिलन असम्भव है। शृँगार रस में जीव और ब्रह्म का सम्बन्ध वर-दुलहिन का होता है। जिस तरह लोक में किसी भी क्वारी कन्या का विधिवत प्राणि ग्रहण बिना आचार्य के वैदिक विधान द्वारा सम्भव नहीं, उसी तरह जीवात्मा रूपी दुलहिन का ब्रह्मरूपी दुलहा के द्वारा विधिवत् प्राणि ग्रहण बिना आचार्य (घटक) की शरणागति के सम्भव नहीं। पति पत्नी रूप जीव-ब्रह्म के सम्बन्ध में अनन्त श्रीअग्रस्वामीजी महाराज लिखते हैं:--

बिन संबन्ध के बातहूँ, पूछत है नहिं कोय।
याते हेतु सुप्रेम के, सम्बन्धहि हिय जोय॥
ताते ब्रह्म अरु जीव के, मिले बिना सम्बन्ध।
कबहुँ न सन्मुख होहिंगे, किये कोटि परबन्ध॥

रस ही मय वह ब्रह्म है, रस ही मय वह जीव।
मिले बिना सम्बन्ध के, भोगत दुःख अतीव ॥
जैसे कन्या के पिता, पतिहिं करत संयोग।
वैसे सदगुरु ब्रह्म ते, जीव मिलावत योग ॥
दुल्लह रामकुमार हैं, दुलहिन है यह जीव।
दोउन के गठजोरि कर, जीव मिलायौ पीव ॥
दोउ कन्या वर मेल से, जस भइ प्रीति अपार।
तस काहू से ना भई, देखहु हिये विचार ॥
यद्यपि कन्या के अहै, कोटिन सुख घरमाहिं।
तद्यपि पति विनु जानती, महारोग सम ताहि ॥
वैसहि जीवहिं विनु मिले, प्रीतम राम सुजान।
कोटिन सुख जो पावहीं, तौ वह नर्क समान ॥
यहँ भो है एक गाँसि यह, जानत मर्मी लोग।
बिन सीता शरणागति, करन गहत वर योग ॥
याते सीता शरण करि, श्रीसद्गुरु महाराज।
जीव मिलावत पीवसों, जो सब के सिरताज ॥
यद्यपि जग में बहुत हैं, प्रभु मिलिबे को उपाय।
तद्यपि भाव समान नहिं, 'अग्र' सो कही बजाय ॥"

ये जीव पीव सम्बन्ध प्रवर्द्धक श्रीसद्गुरु भगवान ही हैं। फिर रस विशेष के लिये आचार्य विशेष भी होते हैं कि इस रस देश में अधिकाधिक पहुँच के लिये जिनकी शरणा-

गति और कृपा प्राप्त करना अनिवार्य्य है। इस तरह शृँगार रस की अधिष्ठात्री देवी रसिक परमाचार्या सखिन शिरोमणि सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकला जू हैं।

अनन्त कोटि ब्रह्माण्डनायक प्राणप्रीतम सरकार श्री-रघुनन्दन जू की प्राणबल्लभा श्रीमिथिलेशराजनन्दिनी जू की ये अभिन्न स्वरूपा हैं। रूप गुण बैभवमें सर्वेश्वरी श्रीचन्द्र-कला जू श्रीमिथिलेश राजनन्दिनी जू की द्वितीय विग्रह रूपा हैं। दम्पति कृपा कोर की प्राप्ति के लिये सखी भाव वाले शृँगारी उपासकों को सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकला जू की कृपा प्राप्त करना नितान्त अपेक्षणीय है। इनकी उपासना से ही शृँगार रस देश में प्रवेश सम्भव है।

शृँगाररस की परमाचार्य्या सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी का आचार्यत्व दोनों प्रमाणों (शास्त्र प्रमाण और आचार्य प्रमाण) से प्रतिपादित और समर्थित है। वन्दना के बाद दोनों प्रकार के प्रमाण प्रकाश में लाये जाते हैं, जिससे उपा-सकों को यथार्थ तत्व का बोध हो जाय और किसी प्रकार का संशय-भ्रम न रह जाय।

द्वितीय-अध्याय

* वन्दना *

वन्दौं श्रीचन्द्रकला अली, सकल सखिन सिर मौर।
कृपा दृष्टि करि हेरिये, सूझे रहस हलोर॥
वन्दौं श्री आचार्य वर, श्रीचन्द्रकला सुख दानि।
जयति शक्ति सर्वेश्वरी, श्री चन्द्रकला महरानि॥
जयति शक्ति सर्वेश्वरी, श्रीचन्द्रकला गुणखानि।
दायिनि प्रेम प्रसाद की, रंक जिवावनि वानि॥
प्यारी तुम्हरे नयन में, काहु न अंजन दीन।
रसिक शिरोमणि सांवरो, सुख युत डेरा कीन॥
निज प्रीतम के प्राणधन, श्रीजनकलली मुदखानि।
प्रेम प्रवाह विवर्द्धनी, अलिगन जीवन दानि॥
जयति शक्ति सर्वेश्वरी, श्रीचन्द्रकला कमनीय।
जिनके कर विहरत सदा, विना दाम सिय पीय॥
विना दाम सिय पीय को, लेन चहत जन जौन।
श्रीचन्द्रकला सेवत सुगम, अगम रहत रस भौन॥
बिनु श्रम भ्रम तिनके हिये, विहरत श्रीसियलाल।
श्रीचन्द्रकला जू की चरणरज, शोभित जिनके भाल॥
कोटि कल्प श्रम करि मरे, भरे न हिय रस रास।
श्रीचन्द्रकला जू के पद कमल, जब लगि हृदय न बास॥

'सिय कान्ति लता' सब आश तजि, स्वांस २ रटु नाम।
श्रीचन्द्रप्रभा जू की लाड़िली, श्रीचन्द्रकला गुण धाम॥

❊ श्लोक ❊

वन्दे चन्द्रकलां देवीं वीणा वादन तत्पराम्।
रास वेश्मनि भावज्ञां जानकी प्रेम विह्वलाम्॥ १॥
सौशिल्यादि गुणैर्युक्तां वात्सल्य रस भूषिताम्।
दयाद्रचित्तां सततं प्रणतार्ति विनाशिनीम्॥ २॥
सुन्दरीं नृत्य हास्यास्यां तयोः हास्यं वितन्वतीम्।
भेदज्ञां हाव भावानां रसानां रस रूपिणीम्॥ ३॥
मां प्राप्य चत्वं देवि राघवं राघव प्रियाम्।
तवैव कृपया जाता श्याम श्यामाहि भावना॥ ४॥
रसाचार्योपदेशेन यत्किञ्चित्स प्रकाशते।
सम्यक् न बुद्धयते भद्रेत्वदीयं रूपमद्भुतम्॥ ५॥
कृपा कारुण्य भावज्ञे प्राप्नुयामिष्ट भावनाम्।
तवैव कृपया रामे दुःख हानिर्भविष्यति॥ ६॥
नमो वाद्य प्रवीणायै चन्द्रकान्त्यै नमो नमः।
नमो सीताप्रहर्षिण्यै विलासिन्यै नमो नमः॥ ७॥
नमस्ते सर्व भावज्ञै चन्द्रायै च नमो नमः।
नमो विद्या स्वरूपिण्यै कृपा रूपिणिते नमः॥ ८॥
चन्द्रकलाष्टकं पुण्यं नारदेन प्रभाषितम्।
यः पठेत्सततं भक्त्या तस्य भावोहि सिध्यति॥ ९॥

शठाय पर शिष्याय दाम्भिकाय हितात्मने ।
न दातव्यमिदं स्तोत्रं भावसिद्धिर्हि दुर्लभा ॥ १० ॥

इति श्रीनारद पंचरात्रं श्रीनारदोक्तं श्रीचन्द्रकलाष्टकं समाप्तम् ।

अर्थः-ब्रह्मर्षि श्रीनारदजी सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी की वन्दना करते हैं कि हे श्रीचन्द्रकले देवि ! मैं आपकी वन्दना करता हूँ। आप वीणा-वादन में तत्पर, रास-रस के भावों को जानने वाली श्रीमिथिलेश राजनन्दिनी जू के प्रेममें विह्वल रहती हैं। सौशिल्यादि गुणों से युक्त, आश्रितों के प्रति वात्सल्य भाव से परिपूर्ण, दया से सदा आपका चित्त भरा रहता है और आप शरणागतों के दुःख को नाश करने वाली हैं ॥२॥ हे सुन्दरी ! आप नृत्य और हास्य-रस में कुशल, श्रीयुगल सरकार दोनों श्रीप्रियाप्रीतम जू के हास्य-रस को बढ़ाने वाली, हाव-भाव रस भेदों को जानने वाली रस-रूपा हैं ॥३॥ हे देवि ! आप दोनों श्रीप्रिया-प्रीतम जू की कृपा प्राप्त करावें, क्योंकि श्रीयुगल सरकार श्यामा-श्याम की भक्ति आपकी कृपा से ही सम्भव है ॥ ४॥ श्रीरसाचार्य के उपदेश से ही यत्किञ्चित् प्रकाश सम्भव है। हे भद्रे ! आपका रूप सम्यक प्रकार से बुद्धिगम्य नहीं है। कृपा और करुणा भाव से परिपूर्ण इष्ट को प्राप्त कराने वाली हैं। हे देवि ! आपकी ही कृपा से दुःख का नाश सम्भव है ॥ ६ ॥ हे श्रीचन्द्रकान्तेजू ! आपको नमस्कार है। हे वाद्य-प्रवीणा जू ! श्रीसीता प्रहर्षिणी जू ! विलासिनी जू ! सर्व भावाज्ञा जू ! श्रीचन्द्रा जू ! विद्या

स्वरूपिणी जू तथा हे श्रीकृपारूपिणी जू आपको बारम्बार नमस्कार है ॥ ८ ॥ यह नारदोक्त पुण्यमय श्री चन्द्रकलाष्टक जो सर्वदा भक्ति पूर्वक पाठ करता है, उसकी भावना सिद्धि को प्राप्त होती है। किसी दाम्भिक और शठ के लिये यह स्तोत्र नहीं देना चाहिये, अन्यथा भाव की सिद्धि दुर्लभहै ।९॥

श्लोकः—सर्वाषां सुसखीनां तु प्रेरिकां गुण सागराम् ।
जानक्याः परम प्रेष्ठां कोक-विद्या विशारदाम् ॥१॥
रसिकानामाचार्यां तां वीणा वादन तत्पराम् ।
दम्पत्योःकेलि मर्मज्ञां वन्दे चन्द्रकलां सखीम् ॥२॥

अर्थः--मधुररस प्रवर्तक परमाचार्य अनन्त श्रीअग्र-स्वामीजी महाराज सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकला जू की सर्व प्रथम इन दो श्लोकों से वन्दना करते हैं कि:--सब सखियों को प्रेरणा करने वाली, गुणसागरी, श्रीमिथिलेश राजनन्दिनी जू की परम प्रेष्ठा सखी, (सखियों के भेद में पांच प्रकार की सखी कही गई हैं । यथाः----

सख्यश्च नित्य सख्यश्च प्राण सख्यश्च काश्चन ।
प्रिय सख्यश्च परम प्रेष्ट सख्यश्च विश्रुता ॥

प्रथम से उत्तरोत्तर श्रेष्ठ है 'अतएव, सब सखियों में मुख्या होने से, और प्यारी पक्ष की अधिकता होने से आप परम प्रेष्ठा (परम प्रिय सखी) हैं ।) कोक विद्या में कुशला रसिकों की परमाचार्या श्रीराजकिशोरी जू की वीणावादन

सेवा में तत्परा, दिव्य दम्पति की रहस्य-केलियों की मर्मज्ञा सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकला जू की मैं वन्दना करता हूँ।

श्लोकः-गांधर्वेषु च पारगा सुसखिषु सर्वासु मुख्या तु या,
दम्पत्योरसुखस्वाद रागनिरता स्वप्ने न वाञ्छापरा।
यावद्रासविलास कार्य्यमखिलंकर्त्री स्वतंत्रातयोस्तां,
वन्देन्दुकलां परां सुरसिकाचार्य्यां तु सीता सखीम्॥

अर्थ—अनन्तश्रीस्वामीमधुराचार्यजी महाराज अपनी माधुर्य्य केलिकादम्बिनी की प्रथम वन्दना में लिखते हैं-गांधर्व विद्या में पारंगत, सब सखियों में मुख्या, दोनों प्रिय के स्वाद राग में निरन्तर रत (प्रेम में पगे) स्वप्न में भी दूसरी वांछा नहीं, इससे तत्सुखी, पुनः दोनों प्रिय के सुखार्थ यावत् रास विलास, नाना प्रकार की केलियों के तत्तत्स्थान, तत्तत् सामग्री, तत्तत् स्थानों पर नृत्यादि विलास के लिये यूथेश्वरियों का यूथ--विभाग करना, यूथे--श्वरियों को सावधान कर तत्तत् स्थानों पर स्थापित कराना, इन सबों को लेकर जितने दोनों प्रिय के आभ्यन्तरिक कार्य्य हैं, उन सबको स्वतन्त्र रूप से करने और कराने वाली परा, सबसे श्रेष्ठा, दोनों प्रिय की प्रीतिपरा, प्राणसमा और समस्त सुसुष्ट रसिकों से महत्त्व प्राप्ता आचार्या श्रीमैथिली जू की सखी हैं।

———

अथ श्रीसर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाष्टक।

❋ श्लोकः ❋

श्रीमच्चन्द्रकलां सरोज सुखमान्नव्यां क्षिपंतीं पदा,
मञ्जीर ध्वनि माधुरेण मधुरां सीतानुगां शोभनाम्।
गच्छन्ती गतिमंदया ललितया गत्या हसन्तीङ्गजम्,
हंसस्यैव वरिष्ठ-मन्दगमन्नित्यं भजंतीं भजे ॥ १ ॥
श्रीमच्चन्द्रकलेति नाम ललिता श्रीचन्द्रभानोःसुता,
जाताया जनकात्मजाजनिदिनात्षष्टेऽन्हिके शोभने।
श्रीमच्चन्द्रप्रभा प्रभा भवनिधेस्संतारणायाद्भुता,
सा त्वम्मे कृपया कुरुष्व करुणां यूथेश्वरी स्वामिनी ॥ २ ॥
या श्रीचन्द्रकला नितम्ब युगलेस्वीये त्रिलोकच्छविम्,
वाहन्तीं युग चक्र कान्तिदमने काञ्च्येवचालङ्कृते।
लौहित्येन नवाम्बरेण ललिते श्रीजानकी वल्लभाम्,
द्रच्येतां सखिमण्डले रघुपतिं संलालयन्तीङ्गदा ॥ ३ ॥
माणिक्यैः परिनद्धया रसनया संराजता वल्गुना,
मध्येनैव सुराजतीञ्जनकजां पार्श्वेस्थितां सुन्दरीम्।
श्यामां सर्व रसावलम्बन कलाभेदेषु नृत्यादिषु चाख्याता,
मुसतीन्नतोस्मि सततं सर्वेश्वरीश्वेश्वरीम् ॥ ४ ॥
या कण्ठे उरसा विभर्ति शुभगं हारम्मनोहारिणं,
मुक्तावृन्द विनिर्मितञ्च त्रिवली युक्तन्तु सूक्ष्मोदरम्।

केयूरादि युतम्मृणाल सदृशं यद्बाहु द्वन्द्वम्बरन्तां ।
श्रीचन्द्रकलां नमामि महिजाकान्तेन सम्मानिताम् ॥ ५ ॥
चञ्चन्द्र मरीचिकान्ति चपला शोभातिगं सुन्दरम् ।
जानक्या वदनं रघुत्तम मुखञ्चालोकयन्तीम्वराम् ॥
कस्तूरी तिलकालकावृतमुखीमीषत् स्मिताननां ।
वीणावादनतत्परां सुरसिकैर्वन्देऽनिशं भाविनीम् ॥ ६ ॥

हे श्रीचन्द्रकले कला सुकुशले विग्यान ज्ञान प्रदे ।
सीताराम सुभक्ति नीर निभरांकल्लोलिनीन्ताम्भजे ॥
मह्यन्देहि रतिम्विदेहतनया कान्ते सकान्तेवरे ।
वात्सल्यादि गुणार्णवे त्रिजगतामीशे कपीश प्रिये ॥ ७ ॥

यावत्त्वत्पदपंकजाश्रितरजो नैवाश्रिताः पण्डिता ।
स्तावद्रामप्रिया कटाक्ष लतिका छायां लभन्तेनुकिम् ॥
मत्त्वैवंरसिका रसेशकुशला विद्या विवेकान्विता ।
स्सेवन्ते करुणाद्रि शीलनयने त्वामेव नित्यं मुदा ॥ ८ ॥

श्रीमच्चन्द्रकलाष्टकं पठतियः श्रद्धान्वितो वा शृणो-
त्यायुष्यं सकलेष्टदं सुशरणं शृंङ्गार शय्या जुषाम् ॥
तस्मै श्रीरघुनन्दनस्सप्रियया तुष्टो कृपा सागरः ।
दत्वा सर्व मनोरथम्पुनरपि मैत्री दशा पश्यतात् ॥ ९ ॥

इति श्रीलक्ष्मण कोटाधीश अनन्त श्रीस्वामी युगलानन्य शरण जी कृपा कटाक्षाश्रित श्रीमत् पंडित प्रवर रसिक शिरोमणि श्री १०८ श्रीरामकान्ताशरण प्रणीतं श्रीचन्द्रकलाष्टकं समाप्तम् ।

अर्थः—अनन्त श्रीस्वामी युगलानन्यशरण चरणाश्रित पंडित प्रवर श्रीरामेकान्ताशरणजी सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी की वन्दना करते हैं कि मैं सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी को भजता हूं, जिनके मुख कमल की शोभा नव विकसित कमल के समान है और जो अपनी मधुर मञ्जीर ध्वनि से युक्त श्रीमिथिलेश राज-किशोरी जू का अनुगमन करती हुई सुशोभित हो रही हैं तथा हंस से भी श्रेष्ठ अपनी ललित मंद गति से गजराज को भी लजाती हैं ॥ १ ॥ जो श्रीचन्द्रभानुजी महाराज की पुत्री हैं और जिनका ललित नाम श्रीचन्द्रकला है, श्रीचन्द्रप्रभाजी की प्रभा रूप समुद्र से श्रीजनकात्मजा जू की छठ्ठी के दिन प्रगट हुई हैं, वे यूथेश्वरियों की स्वामिनी श्रीचन्द्रकलाजी मुझ पर करुणा कृपा करें ॥ २ ॥ जो श्रीचन्द्रकलाजी दो चक्र सदृश अपने नितम्ब युगल से त्रिलोक की छबि को धारण की हुई हैं और अरुणाम्बर से अलंकृत श्रीमैथिली जू की बल्लभा हैं, सखी-मंडल के बीच प्राण-पति श्रीरघुनन्दन जू के संग क्रीड़ा करती हुईं दर्शन दें ॥ ३ ॥ जिनके कटि में मणियों की शब्दाय मान कर धनी हैं और जो सखियों के बीच श्रीमिथिलेश राज-नन्दिनी जू के बगल में विराजती हैं, किशोरावस्था सम्पन्न सर्वरसों की आधार भूता, नृत्यादि कला भेदों में निपुण सर्व ईश्वरियों की ईश्वरी अर्थात् सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी को सर्वदा नमस्कार करता हूँ ॥ ४ ॥ जिनके कण्ठ और हृदय पर मुक्ताओं का मनोहर हार सुशोभित हो रहा है और जिनके त्रिवली संयुक्त सूक्ष्म उदर हैं, केयूरादि से विभूषित जिनकी

दोनों भुजायें हैं और श्रीमैथिली प्राण-वल्लभ जू से सम्मान को प्राप्त सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी को नमस्कार करता हूँ ॥५॥ जिनके अंग चन्द्र सूर्य कान्ति सदृश देदीप्यमान हैं और जो श्रीमैथिली--रघुनन्दन के मुखचन्द्र के दर्शन में संलग्ना हैं, जिनके ललाट पर कस्तूरी का तिलक और मुखचन्द्र पर अलकावली बिखड़ी हुई, मंद मुस्कान युक्त, रसिकों द्वारा भावना करने योग्य सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकला जी की मैं वन्दना करता हूं ॥ ६ ॥ ज्ञान-विज्ञान प्रदान करने वाली सर्व कलाओं में कुशल, श्रीसीतारामजी की भक्ति रूपी जल में कल्लोल करने वाली, हे श्रीचन्द्रकले ! मैं आपको भजता हूं। आप कृपा कर वात्सल्यादि गुण सागरी, श्रीहनुमन्तलाल जू की स्वामिनी, प्राणप्रीतम जू के साथ श्रीविदेह तनया जू के चरण--कमलों में मुझे प्रीति प्रदान करें ॥ ७ ॥ हे श्रीसर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी ! जब तक ज्ञानी आपके चरण-कमल--आश्रितजनों की चरण-रज का आश्रयन नहीं लेते हैं तब तक श्रीराम-प्रिया श्रीमिथिलेश राज-नन्दिनी जू की कृपा कटाक्ष-लतिका की छाया भी नहीं प्राप्त कर सकते। इसलिये, विद्या-विवेक सम्पन्न, रसराज में कुशल रसिकजन करुणा से भरे नेत्र वाली आपका ही सर्वदा सेवन करते हैं ॥ ८ ॥ जो यह श्रीचन्द्रकलाष्टक श्रद्धा से पाठ करें या श्रवण करें, उनका सर्व अभीष्ट पूर्ण हों और शृङ्गार रस की प्राप्ति हो। श्रीरघुनन्दन जू की प्रिया कृपा करके उनके सर्व मनोरथों को पूर्ण करके अपना बनालें ॥ ९ ॥

तृतीय-अध्याय

शास्त्रों (मुनि प्रणीत रस ग्रन्थ) में श्रीचन्द्रकलातत्वः-
श्रीलोमश संहितायां—

* श्लोक *

पिप्पलादो मुनि श्रेष्ठो ब्रह्म पुत्रो दिगम्बरः।
पपृच्छ विनयाद्धीमान् लोमशं मुनि सत्तमम् ॥ १ ॥
भगवन्भवता पूर्वं शक्त्याख्यानश्चद्भुतं ।
कथितं परया प्रीत्या सर्वलोकसुखावहम् ॥ २ ॥
तत्र सर्व महा शक्तिर्वन्धमान पदाम्बुजा ।
प्रेरिका सर्वशक्तिनामचिन्त्यैश्वर्य मण्डिता ॥ ३ ॥
काचिच्चन्द्रकलानाम्नी शक्ति प्रोक्ता त्वया मुने।
तदाख्यानं महद्दिव्यं सर्वकल्मषनाशनम् ॥ ४ ॥
श्रोतुमिच्छामि त्वत्तोऽहं सर्वज्ञा दिव्य दर्शनात्।
कथयस्व महायोगिन् भवबन्ध विमोचनम् ॥ ५ ॥

(अध्याय १५ श्लोक १-३)

अर्थः--मुनियों में परम श्रेष्ठ ब्रह्मपुत्र दिगम्बर तथा बुद्धिमान पिप्पलाद ऋषि ने एक बार विनय पूर्वक महात्माओं में सर्वोत्तम पूज्य लोमश ऋषि से यह प्रश्न किया ॥ १ ॥ हे भगवन्! आपने प्रथम श्रीशक्ति का महान अद्भुत समस्त लोकों को सुख देने वाला सुन्दर आख्यान वर्णन कर सुनाया

॥ २ ॥ उस प्रसङ्ग में सभी महाशक्तियों द्वारा वन्दित चरणाम्बुज और सर्व शक्तियों को प्रेरणा प्रदान करने वाली अचिन्त्य दिव्यैश्वर्य सम्पन्ना ॥ ३ ॥ श्रीचन्द्रकला नाम की कोई सर्वश्रेष्ठ शक्ति का नाम-निर्देश आपने किया था। उनका भव-बन्धन मुक्त करने वाला महादिव्य आख्यान [चरित्र] आप वर्णन करिये। हे महायोगिन ! आप सर्वज्ञ हैं। अलौकिक दिव्य लीलाओं को भी आप देखते हैं। अतएव आपके श्री-मुख से यह रहस्य मैं श्रवण करना चाहता हूँ ॥ ४, ५ ॥

पुनः लोमश संहितायां-अध्याय-१५, श्लोक--५०--५७

* श्लोक *

सखी वृन्द सहस्रेषु मुख्याः षोडस कीर्तिताः ।
षोडशेषु पुनश्चाष्टौ यूथेश्वर्य्यः प्रकीर्तिता ॥ ५० ॥
अष्टस्वपि चतस्रस्तु श्रेष्ठाः केलि प्रवर्तिकाः ।
तासामपि पुनश्चैका मुख्या यूथेश्वरेश्वरी ॥ ५१ ॥
या च चन्द्रकलानाम्नी सर्व विद्या विशारदा ।
सुदक्षा सर्वकार्येषु दम्पत्योः रसवर्द्धिका ॥ ५२ ॥
चातुर्य्यैश्वर्य्य सौन्दर्य्य गुणैः कान्त मनोरमैः ।
लीला वैदग्ध्य भावेन सर्वाभ्यो ह्यतिरिच्यते ॥ ५३ ॥
यूथेश्वरीणां सर्वासां कामं लोकोत्तरो गुणाः ।
तथ;प्याज्ञां प्रतीक्षन्ति सर्वाश्चास्याः गुणोदयात् ॥ ५४

मैथिली प्रीति पात्रत्वात् वैलक्षण्याच्चसर्वतः।
चक्रवर्ति कुमारोऽपि तस्याः साह्यमपेक्षते ॥ ५५ ॥
बाह्यकार्येषु प्राधान्यं भरतस्य यथामतम् ।
तथान्तरङ्ग लीलासु श्रैष्ठ्यमस्या मनोरमे ॥ ५६ ॥
किं वहुक्तेन ते देवि यथार्थं वच्मितत्त्वतः ।
अस्याः प्रभावं माहात्म्यं रामो वेत्ति न चापरः ॥५७॥

अर्थः---उन सहस्त्रों सखियों के मध्य में सोलह सखियां मुख्य कही गई हैं। सोलह सखियों के मध्य भी आठ यूथेश्वरियां मुख्य हैं। उनमें भी चार मुख्य हैं। उन केलि क्रीड़ा प्रवर्तक चार सखियों में भी यूथेश्वरियों की भी ईश्वरी मुख्यतमा एक सखीहैं ॥५०--५१॥ श्रीचन्द्रकलाजी, श्रीचारुशीलाजी २, श्रीविमलाजी ३, श्रीमदनकलाजी ४ श्रीहेमाजी ५, श्रीक्षेमाजी ६, श्रीसुभगाजी ७, श्रीपद्मगन्धाजी ८, श्रीलक्ष्मणाजी ९, श्रीश्यामलाजी १०, श्रीहँसीजी ११, श्रीसुगमाजी १२ श्रीवंशध्वजा जी १३, श्रीचित्ररेखा जी १४, श्रीतेजोरूपाजी १५ और श्रीइन्दिरावलीजी १६ ये सोलह मुख्य यूथेश्वरी सखियां है। सुन्दरी तन्त्र, अगस्त्य संहिता, हनुमत् संहिता तथा अन्य श्रीअग्रस्वामीजी के अष्टयामादि ग्रन्थों में इनका वर्णन आता है। नाम भेद उनके विशेष गुणों को लेकर किसी ने कुछ तो किसी ने कुछ गुण मुख्य मानकर लिखा है, इसलिये नाना नाम भेद से सर्वत्र इन्हीं मुख्य सखियों का बोध करना चाहिये।

इनमें भी प्रथम आठ नाम हैं, वे मुख्य हैं। उनमें भी श्रीचन्द्र-कलाजी १, श्रीचारुशीलाजी २, श्रीमदनकलाजी और श्रीसुभगा जी ये चार मुख्य हैं। उनमें भी श्रीचन्द्रकला जू सर्व श्रेष्ठ हैं।

सर्व विद्या विशारदा, सभी कार्यों में परम चतुरा, दम्पति के रस सुख को बढ़ाने वाली जो श्रीचन्द्रकला नाम की सखी हैं, वे ऐश्वर्य, चतुराई, सौन्दर्य, प्रिया प्रीतम को प्रसन्न करने वाले उत्तम गुण-गण तथा भाव एवं लीला वैदग्ध्य में सभी अन्य सहचरियों की अपेक्षा सर्व श्रेष्ठ हैं।

यद्यपि सभी यूथेश्वरियां दिव्य अलौकिक गुण-गणों के आगार ही हैं तथापि इनके गुणों का सबसे विशेष अभ्युदय जानकर सभी इनकी आज्ञा प्राप्त करने की प्रतीक्षा में रहती हैं। सभी बातों में विलक्षण तथा श्रीराज किशोरी जी की परम प्रीति पात्रा होने के नाते श्रीराघवेन्द्र कुमार भी समय-समय पर इनकी सहायता की चाहना करते हैं। वाह्य कार्यों में जैसे श्रीभरतलालजी का स्वतंत्र सर्वाधिकार है, प्रभु की अन्तरंग लीलाओं में उसी प्रकार श्रीचन्द्रकलाजी प्रधानता में सर्व श्रेष्ठ हैं। विशेष विस्तार करके कहने में क्या रखा है? हे देवि! मैं वस्तुतः जो यथार्थ बात है, वह कह देता हूँ कि इनका प्रभाव और माहात्म्य श्रीरामजी ही जानते हैं, दूसरा कोई पूर्णतः नहीं जानता ॥ ५७ ॥

श्लोकः—एषाहि सर्व शक्तीनामीश्वरी गुणमण्डिता।
प्राणैः प्रियतरा नित्यं श्रीसीतारामयोः सदा ॥ ६ ॥

(अध्याय १६ श्लोक ६)

अर्थः—श्रीशंकर भगवान श्रीपार्वतीजी से कहते हैं—हे देवि ! ये ही श्रीचन्द्रकलाजी सर्व शक्तियों की ईश्वरी (स्वामिनी) हैं। सर्व गुणों से युक्त हैं। बहुत क्या कहा जाय ? श्रीसीतारामजी की निरंतर प्राणों से भी प्रियतरा हैं। ग्रंथकार के यह "तरा" प्रत्यय देने से कहां तक प्रीति की अधिक पात्रा श्रीचन्द्रकलाजी हैं, वह किसी की वाणी में नहीं आ सकता।

श्लोकः—अद्भुतेयं सुता राजन् महाभाग्येन ते गृहे।
जाता ब्रह्मादिभिर्देवैर्वन्द्यमान पदाम्बुजा ॥ ३७॥
यस्मादाह्लादयेत्येषा महत्या प्रभया स्वया।
पूरयत्यखिलं विश्वमचिन्त्यैश्वर्यवैभवा ॥ ३८ ॥
तस्माच्चन्द्रकलेत्यस्या नाम सिद्धं पुरातनम्।
सर्व सिद्धिकरं नृणां जपतां काम भूरुहम् ॥ ३९ ॥
य एतस्यां महाभागा प्रीतिं कुर्वन्ति मानवाः।
भुक्तिं मुक्तिं परांसिद्धिं लभन्ते नात्र संशयः ॥४०॥
परा भक्ति रसास्वाद दात्रीयं चरणार्चिनाम।
नाना केलि रसाभिज्ञाचार्या चातुर्य्य मण्डिता॥४१
सर्वेषामपि यूथानामीश्वरीयं भविष्यति।
अतः सर्वेश्वरीख्याता सखीनां भुवनत्रये ॥ ४२ ॥
विदेहात्मजयाऽद्वैत भावमेषा गमिष्यसि।
चक्रवर्तिं कुमारोस्याःपतिःकश्चिद् भविष्यति ॥४३
(लोमश संहिता, अध्याय १७ श्लोक ३७-४३ तक)

अर्थ:—श्रीयाज्ञवल्क्यजी महाराज श्रीचन्द्रभानुजी महाराज से कहते हैं:—हे राजन् ! आपके महल में बड़े भाग्य से ब्रह्मादि देवों से जिनके चरणारबिन्द बन्दित हैं, यह अद्भुत कन्या प्रगट हुई है ॥ ३७ ॥

जिसके कारण अपनी महती प्रभा से ये अचिन्त्यैश्वर्य्य बैभव वाली समस्त जगत को पूर्ण किये हुए आह्लादित कर रही हैं ॥ ३८ ॥

इसी कारण से इनका नाम 'चन्द्रकला' पुरातन प्रसिद्ध है। इस अर्थ का सारांश यह है कि ऐसा न कोई समझे कि इनका नाम चन्द्रकला है तो ये चन्द्रमा की कला हैं। यह तो "आह्लादने" धातु के अर्थ से आह्लादिनी शक्ति हैं। अतः आप सम्पूर्ण जगत को आह्लादित किये हुई हैं, क्योंकि आह्लादिनी स्वरूपा श्रीमैथिली जू हैं और आप [श्रीचन्द्रकलाजी] इनका दूसरा विग्रह हैं। तब आह्लादिनी स्वरूपा आप हैं ही। अतः चन्द्रकला नाम अनादि प्रसिद्ध है ॥ ३९ ॥

जो नाम मनुष्यों को सर्व सिद्धि देने वाला है और जपने वालोंके लिये तो कल्प बृक्ष ही है। जो महा भाग्यशाली मनुष्य इनमें प्रेम करेंगे वे भुक्ति, मुक्ति और परासिद्धि को प्राप्त होंगें, इसमें सन्देह नहीं ॥ ४० ॥

इनके चरणों का सेवन करने वालों को ये पराभक्ति रसास्वाद को देने वाली हैं अर्थात् सम्बन्धादि द्वारा रसराज का उपदेश कर परम्परागत भक्तों को पराभक्ति-रसास्वाद से

तृप्त करने वाली होंगी और नाना प्रकार के लीलारसों की जानने वाली ही नहीं, किन्तु आचार्य्या हैं अर्थात् जहां तक जो रसबेत्ता होंगे उन सबकी पुरातन आचार्य्या हैं ॥ ४१ ॥

अपने चातुर्य्य गुन से शोभित होंगी और यूथेश्वरियों की ईश्वरी होंगी। इससे सखियों के महल में और तीनों लोकों में सर्वेश्वरी नाम से विख्यात होंगी ॥ ४२ ॥

श्रीविदेहात्मजाजी के साथ ये अभेद भाव को प्राप्त होंगी अर्थात् इन दोनों का आपस में ऐक्य भाव रहेगा। अतएव कोई चक्रवर्ती कुमार इनके पति होंगे ॥ ४३ ॥

पुनः वहां वेद बचन हैः—

श्लोकः—रूपतो गुणतः शक्तेः प्रभावान्मैथिली समा।
तस्मात्सहचरी भावं वैदेह्या लप्स्यते ध्रुवम् ॥ ५१॥
सर्वयूथेश्वरी भूत्वा सर्वपूज्या भविष्यति ।
स्वाश्रितानाञ्च भक्तानां रसराज प्रदायिनी ॥ ५२॥

अर्थ--वेद कहते हैं कि रूप से, गुण से, शक्ति से, प्रभाव से ये श्रीमैथिलीजी के समान ही हैं। इसलिए ऐसा होते हुए भी ये श्रीमैथिलीजी के साथ सहचरी भाव को निश्चय प्राप्त होवेंगी ॥ ५१ ॥ तथा सर्व यूथेश्वरियों की ईश्वरी होकर सब सखी यूथों से और अन्य सब से भी पूजिता होंगी। अपने आश्रित भक्तों को तो यही रसराज प्रदान करेंगी ॥ ५२॥ और भी इस ग्रन्थ में श्रीमैथिली जी और सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी

इन दोनों में जो प्रेम की पराकाष्ठा है, वह जिन महानुभावों को देखना हो सो इसी लोमश संहिता में देख लें। इस ग्रन्थ में आपका परत्व, प्रभाव, विभव, रूप-गुणादि सर्वेश्वरी पद में स्पष्ट प्रमाण हैं।

❀ श्लोक ❀

यस्याः प्रभालोकपतींश्चलोकान् बह्यान्तरं भासयते सुचित्रम्। आश्चर्य्य रूपाञ्च विलासदक्षां रामेष्टदां चन्द्रकलां प्रपद्ये ॥१॥ यदाज्ञया श्रीगिरिजा सरस्वती विधाय रूपाणि-विमोहनानि। विधीश विष्णुप्रमुखास्वलीलया वशीकृता-श्चन्द्रकलेप्रसीद मे ॥ २ ॥ जानाति कोऽस्याहि परत्वमद्भुतं ब्रह्मादि देवैरपि गोपितं महत्। योगीश्वराणामपि भावना-स्पदं राजेन्द्रपुत्रस्य विमोहकारकम् ॥ ३ ॥ अप्राकृतं प्राकृत भाव वर्जितं महोत्तमं रास रस महत्तरं। तव प्रसादेनविनान लभ्यते भजामित्वां चन्द्रकलां रसेश्वरीम् ॥ ४ ॥

अर्थः---जिन सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी की प्रभा समस्त लोकों को सुन्दर चित्र विचित्र रूपसे भीतर और बाहर प्रकाश पहुँचाती है और जिनका रूप आश्चर्य्यमय है। जो अपनी रूप माधुरी से श्रीप्रीतम जू को छन २ में आकर्षित करती हैं तथा विलास में अत्यन्त दक्षा हैं और श्रीप्रीतम जू की जैसी इच्छा होती है, उसी अनुरूप गुण, लीला, विहार, हाव भाव से उनके प्रयोजन को पूरा करती हैं। ऐसी श्रीचन्द्रकलाजी की

शरण में मैं (श्रीनारदजी) प्राप्त होता हूँ ॥ १ ॥ जिनकी आज्ञा से लक्ष्मी, पार्वती, सरस्वती, विमोहन करने वाले रूपों को धारण करके अपनी २ लीला से ब्रह्मा, शंकर, श्रीविष्णु भगवान आदि समस्त शक्ति शालियों को अपने वश में किये हुई हैं, ऐसी हे सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी ! आप हम (श्रीनारद जी) पर प्रसन्न हों ॥ २ ॥ इन श्रीचन्द्रकलाजी के अद्‌भुत आश्चर्य्यमय परत्व को कौन जान सकता है ? इनका महान् परत्व ब्रह्मादिक देवताओं से भी गोपित है। योगीजन अद्‌-भुत चमत्कारमय परत्व को समाधि की अवस्था में स्मरण करते हैं कि आपके परत्व का प्रकाश कुछ हमें भी मिल जाय, जो राजेन्द्र पुत्र श्रीरघुनन्दन जी को भी विमोहित कर देने वाला है ॥ ३ ॥ श्रीप्रिया प्रीतम जू का जो प्राकृत भाव से रहित महान् महत्तर रासरस वह आपके अनुग्रह के बिना किसी को मिल ही नहीं सकता। अतः रसों की ईश्वरी शृँगार रस की अधिष्ठात्री हे श्रीचन्द्रकलाजी ! मैं (श्रीनारदजी) आपकी शरण में हूं ॥ ४ ॥ श्रीमद्‌बाल्मीकि जी और भगवान बेद व्यास जी के भी आचार्य्य ब्रह्मपुत्र श्री-नारदजी को भी शृँगाररस आप ही ने प्रदान किया।

नारदो वाचः—

तन्मंत्रं भावना युग्मं सम्बन्धं स्वात्म सम्भवम् ।
सेवा स्वस्याधिकारं च प्रदेहि सकलेश्वरि ॥१००॥

त्वां हित्वा कुत्र गच्छामि यत्र मेऽतिहितं भवेत् ।
इति श्रुत्वा कृपा मूर्तिः साक्षाच्चन्द्रकला स्वयम् ॥ १०१॥
प्रदाय मन्त्रं युगलं सम्बन्धं भावमात्मनः ।
शृंगारं सर्वसारं च रहस्यं गोपितं च यत् ॥ १०२॥
वीणावतीति नाम्नावै प्रख्याता त्वं भविष्यसि ।
जपस्वभावमात्मानं स्त्री रूपेण चिन्तनम् ॥ १०३॥
ततो रासाधिकारस्ते भविष्यसि न संशयः ।
तदा विद्यां प्रदास्यामि वीणा वाद्यादि दुर्लभाम् ॥ १०४॥
(लोमश संहिता, अ० २१, श्लोक १००-१०४)

अर्थः--नारदजी बोलेः-हे श्रीसर्वेश्वरी जू! मैं आपके श्रीचरणों को छोड़कर और कहां जाऊँ ? जहां जाने पर मेरा अत्यन्त हित हो। मैं तो अपनी परम हितकारिणी आपको ही जानता हूँ। आप ही कृपा कर युगल मन्त्रराज का उपदेश सम्बन्ध भावना अष्टयामादि रहस्य प्रदान करिये, जिसके द्वारा अन्तरंग सेवा का अधिकार मुझे भी प्राप्त हो ॥ १०० ॥ नारद मुनि के श्रद्धाभक्ति युक्त वचन श्रवण कर साक्षात् कृपा-मूर्ति श्रीचन्द्रकलाजू ने स्वयं कृपा कर युगल मन्त्रोपदेश सम्बन्ध भावना आत्म-स्वरूप परिचय सर्वरस सार शृँगार-रस का गोपनीय रहस्यादि सब विधिपूर्वक प्रदान किया और कहा ॥ १०१-१०२ ॥ हे मुनि ! आप अपने इस देह का विस्मरण कर दिव्य सखी स्वरूप का चिन्तवन करते हुए युगल

मन्त्रराज का जप करिये। अब उस दिव्य देह में आप वीणावती सखी के नाम से विख्यात बनोगे, तब रास-मण्डल प्रवेश का अधिकार भी निस्सन्देह आपको प्राप्त होगा। उस समय देव दुर्लभ वीणा-वादन-विद्या भी मैं आपको प्रदान करूँगी।

(१०३-१०४)

शिव-संहिता:—

दशवें अध्याय में प्राण-प्रीतम के साथ सखीगणों की बृहद्--लीला का वर्णन भगवान शंकर करते हैं, जिसका प्रारम्भ चन्द्रादि चर्चिता सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकला जू के साथ होता है।

श्लोकः-तर्जन्या तर्जयत्काचिद्विप्रलब्धा स्ववंचकम्।
मुखांभोजं चुचुंबास्य चन्द्राख्या चतुरा सखी॥
प्रेयसः करमाधत्ते कुचे चन्द्रकला मृदौ।
चन्द्रा कान्त कपोलं स्वकपोलेन त्वयोजयत्॥

अर्थ:--कोई अपनी तर्जनी से प्राणनाथ को तर्जन कर रही हैं, क्योंकि पहले किसी प्रकार से राज-कुमार जू ने इससे कुछ वंचना की लीला की है। इतने में श्रीचन्द्राजी ने आपके मुख कमल का चुम्बन किया, क्योंकि ये बड़ी चतुरा सखी हैं। प्यार भरी श्रीचन्द्रकला जू ने अपने वक्षस्थल में प्रिय के कोमल--करों को स्थापित किया और श्रीचन्द्राजी ने कान्त के कपोल को अपने कपोल से योजित किया।

कौशल--खण्डः—

ब्रह्म रामायणान्तर्गत रहस्य के परम प्रामाणिक ग्रन्थ श्रीबृहद् कौशल खण्ड के अध्याय ९ नवें के श्लोक १२ बारह में भगवान बेद ब्यास जी लिखते हैं:—

चन्द्रार्चिता चन्द्रकलाभिसेव्या,
चन्द्रावती चर्चित चारुरूपा ।
भद्रानुभाव्या भवभूति वन्द्या,
वैदेह वंश्येति पतिं मृदूचे ॥

(बृहद् कौशल–खण्ड, अध्याय ९, श्लोक १२)

अर्थः—श्रीचन्द्राजी से पूजिता जो श्रीचन्द्रकलाजी, उनसे जो अभिसेव्या अर्थात् अभितः सर्वतः सर्व प्रकारेण वाह्यान्तरेण सेव्या श्रीमैथिलीजी हैं। यहां श्रीचन्द्राजी उपलक्ष्य हैं अर्थात् श्रीचन्द्राजी से लेकर जहां तक जो सखीगण हैं, उन सबसे जो पूजिता श्रीचन्द्रकलाजी हैं, उनसे सब प्रकार से सेवित श्रीमैथिलीजी हैं।

यहां और सखियों में उपसर्ग न लगाकर इन्हीं में 'अभि' उपसर्ग लगाया, इससे भी आपका सबसे प्रधान सर्वेश्वरी पद सूचित हो रहा है, क्योंकि उपसर्ग प्रधान ही में लगाया जाता है।

अगस्त्य--संहिताः—

श्रीअगस्त्य-संहिता में भगवान श्रीअगस्त्यजी ने श्री-विदेहराज-किशोरी जू की अति प्रिया मुख्यतमा सखियों के नाम आदि में श्रीचन्द्रा-चन्द्रकला लगाकर ही गिनाये हैं।

श्लोकः-चन्द्रा चन्द्रकला चान्द्री चन्द्रकान्ता च चन्द्रिका।
चन्द्रमुखी चंचरी चंचु चन्द्रचूड़ावबोधनी ॥
चारूनेत्रा चरोच्चाराचारिका चारूदायका ।
चार्वांगी चंचलाचैला चारूका चारूमोदिका ॥
चेटिका चारूमती चारूशची चार्वाश्रयाचरालिका।
चम्पा चित्तचरी चित्ताचिंतामणिः चरात्मिका ॥
चूरा चेतसी चेता चेतयती चतुरावरा ।
चंपिका चंपदा चंपा चंपी चंपकरोचिका ॥
चञ्चला चपला चेलिः चिदा चित्तप्रकाशिनी ।
चण्डीचपेटिका चंटा चंटिका चन्द्रदंडिका ॥
कमला विमला वाला मामल्लिका अमला ।
मराला मालिका मोदा मृगाक्षी माधवी मुदा ॥
मोहा मोहप्रदा अमंदा माया मेधाउरमण्डला ।
मंडिता पंडिता प्रेमा परेशा पापनाशिनी ॥
सारिका साटिका सारी शीरिका वारिजानना ।
वरदा अभयदा भीता भामिनी मंद गामिनी ॥

व्यापिका वेदिका वेदावोधिका विबुधापरा ।
धिष्णा धीरिका धीप्रदा धीवरी ॥
जानिका जाननी जवां जागन्ती जंगमाजना ।
एताः प्रधाना सख्यः मुख्यः ॥
एतामुख्यतमातस्याः सख्यः पूज्यः प्रयत्नतः ॥
भुक्ति मुक्तिप्रदा देव्यस्तत्सहायकास्तदात्मिकाः ॥
तद्गुणास्तुपृथक् पूज्याः प्रत्येकं शतशः प्रिय ॥

देवल-संहिताः—

'श्रीराम-भक्ति में रसिक-सम्प्रदाय' के पृष्ठ, २३८ पर ग्रन्थ के लेखक डा० भगवतीसिंह ने श्रीमिथिलेश-राज-किशोरी जू की बहनों (महाराज जनक तथा उनके भाइयों की निम्नांकित इक्कीस पुत्रियाँ) के नाम देवल-संहिता के आधार पर लिखा है। जिसमें सर्व प्रथम सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी का नाम है।

श्रीचन्द्रकलाजी, श्रीसुषमाजी, श्रीपरमाजी, श्रीरति-बर्द्धिनीजी, श्रीमोदिनीजी, श्रीतरंगाजी, श्रीउमङ्गाजी, श्रीमाधुर्या-जी, श्रीविहारिणीजी, श्रीश्रुतिकीर्तिजी, श्रीमांडवीजी, श्रीउर्मिला-जी, श्रीसीताजी, श्रीचारुशीलाजी, श्रीक्षेमाजी, श्रीबरारोहाजी, श्रीपद्मगन्धाजी, श्रीशुभगाजी, श्रीलक्ष्मणाजी, श्रीहेमाजी।

श्रीचन्द्रकला तत्त्व प्रति-पादन में

॥ आचार्य–प्रमाण ॥

अनन्त श्रीमद् अग्र-स्वामीजी महाराज

अनन्त श्रीअग्रस्वामीजी महाराज की वाणी में युगल सरकार की अष्ट सखी:—

❀ अष्ट सखियों की वन्दना ❀

सर्वासां सु सखीनां तु प्रेरिकां गुण सागराम् ।
जानक्याः परम श्रेष्ठां कोकविद्याविशारदाम् ॥ १ ॥
रसिकानामाचार्यीतां वीणावादन तत्पराम् ।
दम्पत्योः केलिमर्मज्ञां वन्दे चन्द्रकलां सखीम् ॥ २ ॥
चारुशीलां सखीं वन्दे सर्वाभरण भूषिताम् ।
गान विद्या प्रवीणानां कुशलां रसरूपिकाम् ॥ ३ ॥
सुन्दरांगीं हेमरूपां विमलां मन्दगामिनीम् ।
वन्देतां सुसखीं प्रेम्णादम्पत्योः रस वर्द्धिकाम् ॥ ४ ॥
वन्देऽनंगकलाभिज्ञां तां मदनकलाभिधाम् ।
मन्दोदरीं महाप्रज्ञां दम्पत्योः प्रेमदायिकाम् ॥ ५ ॥
हेमांगीं चन्द्रवदनां हेमारूपाविलक्षणाम् ।
वन्दे रसविद्यात्रीं तां सुन्दरीं रसरूपिणीम् ॥ ६ ॥

वन्दे चारूतरां रूपां क्षेमां क्षेमविधायिनीम् ।
मर्मज्ञा सर्व कार्येषु दम्पत्योर्भावदायिकाम् ॥ ७ ॥
रसानां रस भावानां मर्मज्ञा शुभदायिकाम् ।
वन्दे सखीं तां शुभगां सुकलनां प्रकाशिकाम् ॥ ८ ॥
वाद्यविद्या प्रवीणानां कुशलां पद्मगन्धिकाम् ।
वन्ते तां सुमहाप्रज्ञा मुत्फुल्लोत्पललोचनाम् ॥ ६ ॥
सीतारामयोश्चेतास्युः सख्यौऽष्टौ रसरूपिकाः ।
मुख्यास्सर्वेषु कार्येषु दम्पत्योः प्राण वल्लभाः ॥१०॥
एता सामनुगाः यास्तु सख्यश्च गुण भूषिताः ।
वन्दे तासां पदद्वन्द्वं यास्स्युः नोकुल देवताः ॥११॥
एतासां यूथमुख्यानामग्रदासेन वन्दनाम् ।
कृतांयश्च पठेन्नित्यं सभाव सुखमश्नुते ॥ १२ ॥

अर्थः—श्रीअग्र स्वामीजी महाराज अष्ट सखियों की वन्दना करते हैं, जिनमें सर्व प्रथम श्रीराज-किशोरीजी की परम श्रेष्ठा सखी सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी की दो श्लोकों में वन्दना करते हुए कहते हैं कि:—

सब सखियों को प्रेरणा करने वाली (आज्ञा प्रदान करने वाली) गुण-सागरी, कोक कला में पण्डिता, बीणा-वादन में परम कुशला मिथिलेश राज-नन्दिनी जू की परम श्रेष्ठा (अतिशय प्रिय) सखी श्रीचन्द्रकलाजी की मैं वन्दना करता हूँ ॥ २ ॥

सब अलंकारों से अलंकृत, गान–विद्या में प्रवीणा, रस-रूपा, चतुरा सखी श्रीचारुशीलाजी की वन्दना करता हूं ॥३॥

स्वर्ण–आभा सम्पन्न सुन्दर अंगों वाली मंद गामिनी, दिव्य-दंपति के रस को बृद्धि करनी वाली सखी श्रीविमलाजी की प्रेम से वन्दना करता हूं ॥ ४ ॥

कोक–कला निपुणा, कृशोदरी विशाल बुद्धि सम्पन्ना युगल--सरकार, दिव्य–दंपति के प्रेम को देने वाली, श्रीमदन--कला नाम की सखी की वन्दना करता हूँ ॥ ५ ॥

सुवर्ण के सदृश अंगों वाली, चन्द्रमुखी रूप–विलक्षणा, रस का विधान करने वाली, रस--रूपिणी सखी सुन्दरी श्री-हेमाजी की वन्दना करता हूं ॥ ६ ॥

सुन्दर रूप वाली, कल्याणदात्री सर्व कार्यों की मर्मज्ञा, दिव्य दंपिति के भाव को प्रदान करने वाली सखी श्रीक्षेमाजी की वन्दना करता हूँ ॥ ७ ॥

रस भावों की मर्मज्ञा, शुभ को प्रदान करने वाली तथा सुन्दर कलाओं को प्रकाश करने वाली सखी श्रीसुभगाजी की मैं वन्दना करता हूँ ॥ ८ ॥

वाद्य-विद्या में प्रवीणा, विशाल बुद्धि वाली चतुरा, प्रफुल्ल--कंज--लोचना सखी श्रीपद्म–गन्धाजी की वन्दना करता हूं ॥ ९ ॥

श्रीसीतारामजी महाराज की ये अष्ट सखियाँ रस-रूपा हैं। सब कार्यों में प्रधाना हैं तथा दिव्य–दम्पति श्रीयुगल-सरकार प्रिया-प्रीतम जू की प्राण-वल्लभा हैं ॥ १० ॥

सर्व गुण सम्पन्ना इन सखियों के चरण-कमलों की वन्दना करता हूँ जो हमारे कुल--देवता हैं ॥ १२ ॥

प्रातः स्मरणीय रसिक परमाचार्य अनन्त श्रीअग्र--स्वामीजी कृत इन यूथेश्वरियों की वन्दना का जो नित्य पाठ करें, वे सुख मय भाव को प्राप्त करेंगे ॥ १२ ॥

मधुररस प्रवर्त्तक परम रसाचार्य अनन्त श्रीअग्रस्वामी-जी महाराज जो शृँगाररस देश में सर्व-सम्मति से आचार्य माने जाते हैं, सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजू के अवतार हैं। जो श्रीअग्र- स्वामीजी कृत "श्रीअग्र-रहस्य चन्द्रिका" के मंगला-चरण में ही श्रीनाभा स्वामीजी की वाणी से प्रगट है:—

* श्लोक *

जगद्गुरो नमस्तुभ्यं कृपामृत महोदधे ।
ममात्मनः परित्रातः रस मार्ग प्रवर्त्तकः ॥ १ ॥
त्वं श्रीचन्द्रकला साक्षात् यूथेश्वर्यग्रवर्तिनी ।
अग्र आलिरितिज्ञेया आचार्या रसवेदिनाम् ॥२॥
कृपया वद मे स्वामिन् श्रीमतां मतमुज्ज्वलम् ।
वेद वेदान्त सारं च रसमार्गस्य सूचकम् ॥ ३ ॥

अर्थः—श्रीनाभा स्वामीजी अपने गुरुदेव श्रीअग्र-स्वामी जी महाराज से प्रश्न करते हैं कि हे कृपामृत महोदधे! मेरी आत्मा के रक्षक! रस मार्ग के प्रवर्त्तक! जगद्गुरु! प्रभो! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। ॥ १ ॥

आप साक्षात् सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी हैं और रसों की मर्मज्ञा रसाचार्या 'श्रीअग्रअली' नाम करके प्रसिद्ध हैं ॥२॥

हे प्रभो ! कृपा करके वेद--वेदान्त का सार रस--मार्ग का सिद्धान्त अपना उज्ज्वल मत मुझ से कहें ॥ ३ ॥

शृँगार रस के परमाचार्य श्रीअग्र-स्वामीजी महाराज सर्व सम्मति से सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी के अवतार हैं। इसी को श्रीरसिक-अलीजी महाराज अपने "श्रीसीताराम-रस-चन्द्रोदय" नामक ग्रन्थ में बन्दना करते हुए लिखते हैं:—

❊ श्लोक ❊

कलायाश्चन्द्रमा यस्या यातश्चन्द्रकलेतितां नमाम्यहम् ॥
श्रीजानक्या वयस्याहि नाम्ना चन्द्रकला शुभा ।
तस्याऽवतारो लोकेऽस्मिन अग्रदासेति विश्रुतः ॥ १४ ॥
येन श्रीराम-सीतोक्ता शृंगार रस सम्प्रदा ।
सम्बन्ध भेदभावेन भक्तेषु प्रगटी कृता ॥ १५ ॥
भक्तानामाग्रणी भावैः ललितै रामसीतयोः ।
वयस्या रूपमाश्रित्य नित्यं सेवासु तत्परः ॥ १६ ॥
अतएव अग्रदासेति विख्यातो सज्जनैश्च यः ।
तं वन्दे परमाचार्यं सीताराम रसाश्रयम् ॥ १७ ॥

अर्थः—"जिनकी कला से चन्द्रमा जायमान होते हैं, ऐसी श्रीचन्द्रकलाजी को मैं नमस्कार करता हूं ।"

श्रीमिथिलेश राजनन्दिनी श्रीजानकीजी की सखी जो श्रीचन्द्रकला नाम की हैं, उन्हीं के अवतार श्रीअग्रदासजी करके लोक में विख्यात हैं ॥ १४ ॥ जिनसे श्रीसीतारामजी के शृँगार-रस सम्प्रदाय का सम्बन्ध भेद-भाव द्वारा उपासकों के बीच प्रचार हुआ है ॥ १५ ॥ जो श्रीअग्र-स्वामीजी महाराज श्री-सीतारामजी के शृँगार भाव से सम्पन्न भक्तों के अग्रगण्य हैं और सखी रूप धारण कर नित्य सेवा में तत्पर रहते हैं ॥१६॥ अतएव, श्रीअग्रदासजी करके जो संतों के बीच विख्यात हैं। श्रीसीतारालजी के शृँगार रसराज के उन परम रसिकाचार्य की मैं (श्रीरसिकअलीजी) बन्दना करता हूँ ॥ १७ ॥

[श्रीरसिक-अलीजी कृत-श्रीसीताराम रस चन्द्रोदय]

श्रीअग्रस्वामीजी महाराज अपने "श्रीअग्र रहस्य-चन्द्रिका" में लिखते हैं :--

श्लोकः-सीताराम कृपामूर्त्तिः ज्ञेया च चन्द्रकलाभिधा।
यूथेश्वरीषु पूज्या या सा भरतोऽभूद्वाह्यके भवत् ॥
चारुशीलापि विज्ञेया महत्यूथेश्वरी खलु ।

अर्थः— भगवान श्रीसीतारामजी की साक्षात् कृपा मूर्ति जो श्रीचन्द्रकला-नाम से प्रसिद्ध हैं, यूथेश्वरियों में सर्वपूज्या हैं। वहिरंग सेवा में उन्हीं के अवतार युगल सरकार के परि-कर श्रीभरतलालजी हैं। श्रीचारुशीलाजी भी महायूथेश्वरी हैं।

—— ::※:: ——

अनन्त श्रीमद्गोस्वामी तुलसीदासजी महाराज

श्रीमद्गोस्वामीजी महाराज अपने श्रीरामचरित मानस के फुलवाड़ी प्रसंग में लिखते हैं कि—

"एक सखी सिय संग विहाई। गई रही देखन फुलवाई॥"

एक का अर्थ चन्द्रमा अर्थात् श्रीचन्द्रकला नाम्नी प्रधाना सखी पुष्प-वाटिका देखने गई थी। उन्हीं को— **"चली अग्र करि प्रिय सखि सोई"** आगे कर चली। श्रीयुगल प्रियाजी महाराज ने श्रीरसिक-प्रकाश-भक्तमाल में गोस्वामी-जी महाराज के इसी आशय का स्पष्टी-करण इस तरह किया है:—

अग्र स्वामि श्रीअग्र सहचरी जनक ललो की।
पुष्प वाटिका मिलन हेतु प्रिय भाँति भली की॥
चन्द्रकलावर नाम श्याम सिय बश करि राखी।
प्रगटि स्वामि पद् लहो ध्यान रस मनमन चाखी॥

"पुष्प वाटिका में दोऊ गये दल फूल लेन तहाँ अग्रगामिनी ह्वै लाल को बताये हैं। महल विहारिणी विहार अग्र सहचरी चन्द्रकला अलीअग्र अली सों जनाये हैं॥"

(टीका श्रीरसिक प्रकाश भक्तमाल, श्रीजानकी रसिकशरणजी)

❀ श्रीसूर-किशोरजी महाराज ❀

श्रीसूर-किशोरजी महाराज ने अपने 'श्रीमिथिला-विलास' नामक ग्रन्थ में किन्हीं और सखी का कोई विशेष परिचय नहीं दिया है। फिर भी सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी का निमिवंश में प्राकट्य बतलाकर ग्रन्थ में दो-दो बार श्रीचन्द्रकला नाम का वर्णन किया है।

जनकलली मधुरे स्वर गावैं।
नई २ तान सुनावैं सहचरि, चन्द्रकला अलि वीन बजावैं॥
कोउ अलि मधुर मृदङ्ग बजावैं, कोउसखि रीझि २ गुनगावैं।
कोउसखि रैनदिवस सुधिभूली, कोइ सखि मुखपर भौंर उड़ावैं॥
राजकिशोरी विराजैं महलमें, बिन सखियनकोउ जान न पावैं।
'सूरकिशोर' बलैया लेहीं, कोउ सखि व्याहकी बात चलावैं॥

❀ श्रीनाभा स्वामीजी ❀

इनके आचार्य श्रीअग्रस्वामीजी महाराज हैं, जिनको ये साक्षात् श्रीचन्द्रकलाजी बता रहे हैं। अतएव, उनकी आचार्या श्रीचन्द्रकलाजी हैं।

श्रीअग्र रहस्य चन्द्रिकाः—

नाभोवाचः—

श्लोकः- जगद्गुरो नमस्तुभ्यं कृपामृत महोदधे।
ममात्मनः परित्रातः रस मार्ग प्रवर्त्तकः॥ १॥

त्वं श्रीचन्द्रकला साक्षात् यूथेश्वर्याग्रवर्तिनी ।
अग्र आलिरितिज्ञेया आचार्या रसवेदिनाम् ॥ २ ॥

अर्थः--श्रीनाभा स्वामीजी अपने गुरुदेव श्रीअग्रस्वामीजी महाराज से प्रश्न करते हैं कि हे कृपामृत महोदधे! मेरी आत्मा के रक्षक! रसमार्ग के प्रवर्त्तक जगद्गुरु प्रभो! मैं आपको नमस्कार करता हूँ।

आप साक्षात् सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी हैं और रसों की मर्मज्ञा रसाचार्या 'श्रीअग्रअली' नाम करके प्रसिद्ध हैं ॥२॥

स्वामी श्रीमधुराचार्यजी

श्रीमाधुर्य्य-केलि-कादम्बिनीः—

अनन्त श्रीअग्रस्वामीजी महाराज के गुरु-भ्राता श्री-कील-स्वामीजी के कृपाश्रित गलतागाद्याधीश श्रीमधुराचार्यजी ने अपने ग्रन्थ "श्रीमाधुर्य्य केलि कादम्बिनी" में अपनी आचार्या सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी की प्रथम वन्दना की हैः--

श्लोकः-गान्धर्वेषु च पारगा सुसखिषु सर्वासु मुख्या तु या।
दम्पत्योस्सुख स्वादराग निरता स्वप्नेन वाञ्छापरा॥
यावद्रासविलास कार्य्यमखिलं कर्त्री स्वतंत्रातयोस्तां
वन्देन्दुकलां परां रसिकाचार्य्यां तु सीता सखीम्॥

अर्थः--गांधर्व विद्या में पारंगत, सब सखियों में मुख्या, दोनों प्रिय के स्वादराग में निरन्तर रत, स्वप्न में भी

दूसरी वाञ्छा नहीं, दोनों प्रिय के सुखार्थ यावत् रास-विलास नाना प्रकार की केलियों के लिये सब सौज सजाने तथा यूथेश्वरियों को सावधान करने में सर्व स्वतन्त्र, सबसे श्रेष्ठा दोनों प्रिय की प्रीतिपरा समस्त रसिकों से महत्वप्राप्ता श्रीमैथिलीजू की सखी श्रीमती श्रीचन्द्रकला जू की वन्दना करता हूं।

-: स्वामी श्रीहरियाचार्यजी :-

श्रीजानकी गीतः—

स्वामी श्रीमधुराचार्यजी महाराज के शिष्य "श्रीजानकी गीत" कार स्वामी श्रीहरियाचार्यजी अपने प्रधान रस-ग्रन्थ "श्रीजानकी गीत" में प्रिया-प्रीतम की रहस्य--लीलाओं में परिकरों के बीच प्रधान सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजीको ही दिखाया है और भाष्यकार श्रीबलदेव सूरि ने समस्त ग्रन्थमें लीलाके पात्रों में श्रीचन्द्रकलाजी की ही प्रधानता दिखायी है।

श्लोकः- श्रुत्वा वसन्तश्रियमाशुकान्तां,
जातास्पृहासौ जनकात्मजासीत्।
अथाब्रवीच्चन्द्रकला चलाक्षी,
सानन्दमेनां चरितानि पत्युः॥

अर्थः--बसन्त शोभा वर्णन सुनकर श्रीराजकिशोरीजू श्रीप्रीतमजू से मिलने की इच्छुक हुईं अथवा श्रीजनकराज--नन्दिनीजू को उस शोभा के दर्शनोंकी इच्छा हुई। तब चञ्चल

नेत्र वाली प्रियाजू की प्रिय सखी श्रीमती श्रीचन्द्रकलाजी आनन्द युक्त होकर श्रीप्राण--बल्लभ जू का चरित्र कहने लगी।

श्रीबाल--अलीजीः—

इनने रैवासा में निवास किया था। कहते हैं--श्रीकृपा--निवासजी महराज ने इनसे सम्बन्ध लिया था जो 'श्रीरसिक-प्रकाश-भक्तमाल' से भी जान पड़ता है। श्रीकृपानिवासजी महाराज के चरित्र में लिखा है.---

"उत्तम जनम अति उत्तम धरम सदा वचन करम मन राम रंग रये हैं। छांड़ि जग राग उर धारि कै विराग जाय सन्त संग पाय कै रैवासे शिष्य भये हैं।"

श्रीबालअलीजी महाराज ने अपनी ध्यान--मंजरी में अनन्त सखियों के बीच सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलादि सखियों को ही मुख्यतमा लिखी हैं।

श्रीविमला अरु चन्द्रकला चन्द्रा पुनि पद्मा।
माध्वी कर्पूराङ्गी सिता असिता सुख सद्मा ॥२४८॥
इनहिं आदि दै दलनि मुदित सोहत सखिश्रेनी।
सेवहिं युगलकिशोर अमल पंकज दल नैनी ॥२४६॥

रास में प्रिया--प्रीतमजू का मनोभाव जानकर सर्वे--श्वरीजू ने ही वीणा-वादन से चन्द्र--स्तम्भन किया था :—

दोहा—रस विलसत प्रीतम सुखहिं, चिर निशि चाह प्रवीन ।
चन्द्रकला चन्द्रहिं निरखि, मधुर यन्त्र स्वर कीन ॥
(नेह-प्रकाश)

श्रीकृपानिवासजी महाराजः—

यह सर्व विदितहै कि श्रीकृपानिवासजी महाराज के संस्कारादि दीक्षा गुरु श्रीप्रसादाजी हैं । अपने गुरु को सर्वाधिक श्रेय देनेके कारण श्रीराजकिशोरी जू की अष्ट--सखियों में प्रथम श्रीप्रसादाजी का नाम लिखकर फिर इनने सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजीका नाम लिखा है, जो यथार्थ में प्रिया-पक्ष की सर्व मुख्या सखी हैं । जिसको महाराज ने अपने 'रहस्योपास्य' नामक ग्रन्थ में स्पष्ट किया है:—

अब सुनु लली लाल अलि मुखिया ।
सबहीं भाव रहस वश झुकिया ॥
चन्द्रकला पुनि मदन कला अस ।
सेवा अवधि रहत नित युग बश ॥

श्रीपरांकुशदासजीः—

अनंत श्रीस्वामी मधुराचार्य पादानुसेवी स्वामी श्रीपरांकुशदासजी ने आचार्य अनुसरण कर श्रीचन्द्रकलाजी को ही अपनी सर्वेश्वरी मानी है, जिसकी झलक इनके 'श्रीराम-विलास बन' नामके ग्रंथ में बहुल स्थलों पर मिलती है--यथा:--
'श्रीराम विलास-बन' ग्रंथ के पंचम प्रभाव के कौशिक बन

विहार के रास प्रसंग में श्रीमिथिलेश राजनन्दनीजू रास नृत्य के लिये अपनी सखियों से ईशारा करती हैं, जिनमें सर्व प्रथम सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजू हैं----

दोहा-राज कुवँरि निज सखिन सों, करी नैन की सैन।
उठी सबै वे सुन्दरी, शशि वदनी मृग नैन॥
श्रीचन्द्रकला मन मोद सों, लियौ तमूरा आप।
गुनिकरि अली सरस स्वर, सुन्दर कियो अलाप॥
एक अली आनन्द सों, मधुर टंकोर मृदङ्ग।
चन्द्रा ताल बजावहीं, आनन्द भरी उमङ्ग॥
चन्द्रकान्ता चपल चित, नृत्य करै पुर बाल।
नाना भाव बतावहीं, रीझै कौशल पाल॥

एकादश प्रभाव की आँख मिचौनी--लीला में प्रीतम, प्रियाजू की प्रधाना सखी सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजू से श्रीस्वामिनीजू के नेत्र बंद करने का आग्रह कर रहे हैं:---

चन्द्रकलाजू बुलाय कै, कहे कुवँर वर वैन।
राजकुवँरि के मूंदिये, दोऊ करन सों नैन॥
सुने वचन कल कुवँर के, हंसें लसें बर बाल।
परस्परें कर कामिनी, मुख मूंदो ततकाल॥
चन्द्रकला सिय नैन दोऊ, गहे करन सों जाय।
लालन अन्तरध्यान ह्वै, दुरे कुञ्ज में जाय॥

इस तरह ग्रन्थ के षोड़स प्रभाव में अशोक--बन की रास--लीला के लिये रास रासेश्वरी सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी ही सर्व प्रधाना होने के नाते प्रिया--प्रीतमजू से कह रही हैं:--

मंद मधुर मुसकाय करि, चन्द्रकला कहैं बैन।
बन अशोक में चालिये, सुन्दर राजिव नैन॥
चन्द्रकला के वचन सुनि, हरषे कौशल चंद।
अति मन हरषीं सहचरी, बोलत मुलकहि मंद॥
गहे कंज कर लाड़िली, रसिक रसीले लाल।
चले अशोकबन युगल युत, बैठि रजत सुखपाल॥
आये विपिन अशोकबन, कुवँर कुवँरि संग जोरि।
अङ्गन अङ्ग सु सोहनो, सङ्ग सोहनी गोरि॥

श्रीसीतायणकार श्रीराम-प्रियाशरणजी

श्रीसीतायणजीः—

स्वामी श्रीराम-प्रियाशरणजी अपने ग्रन्थ 'श्रीसीतायण-जी' के जयमाल-काण्ड की चतुर्थ मधुरता में रास-रासेश्वरी सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी को नारद भगवान की बीणाचार्या बतलाते हैं, जो स्वयं नारद भगवान की उक्ति मिथिलेश महा-राज श्रीजनकजी के प्रति है:--

प्रेम भरे नारद कहते हैं। राजा सुनि आनंद लहते हैं॥
तब कुवँरी अरु राम-विहारी। नृत्यत युगल परस्पर न्यारी॥

थेइ २ करहिं मुखन मृदुवाणी । परम प्रेम की घन उमड़ानी ॥
वहुविधि नृत्यगान तहं भयऊ । निमिष२ उपजत सुख नयऊ॥
बहुरि सिंहासन बैठे आई । नवल सहचरी पान खवाई ॥
चन्द्रकला जो वीण बजाई । सब के मन अभिलाष पुराई ॥
तहं मोहि वीण बजावन आई । चन्द्रकला मोकहं सिखलाई॥"

(लोमश संहिता की सर्वेश्वरीजी के प्रति नारद-स्तुति की छाया इस पर पड़ती है) यथाः—

श्लोकः-नारदोक्त स्तवं श्रुत्वा प्रसन्ना जगदीश्वरी ।
कोटि विद्युत्प्रभाभासा साविर्भूता मनोहरी ॥ ८६॥

(लोमश संहिता, अध्याय-२१, श्लोक-८६)

अर्थ.—नारद मुनि का स्तोत्र सुनकर प्रसन्नचित्ता जगदीश्वरी श्रीचन्द्रकलाजू कोटि विद्युत् प्रभा को निन्दित करने वाले अपने दिव्य-विग्रह से मन को हरण करने वाली देवी प्रकट हुई ॥ ८६ ॥

श्लोकः- तन्मे शमय देवेशि कृपया रामबल्लभे ।
वीणावाद्य रहस्यं मे प्रदेहि सकलेश्वरि ॥ ६२ ॥
तन्मन्त्रं भावना युग्मं सम्बन्धं स्वात्मसम्भवम् ।
सेवां स्वस्याधिकारं च प्रदेहि सकलेश्वरि ॥ १००॥
"इति श्रुत्वा कृपामूर्तिः साक्षाच्चन्द्रकला स्वयम्"
प्रदाय मन्त्र युगलं सम्बन्धं भावमात्मनः ।
शृंगारं सर्वसारं च रहस्यं गोपितं च यत् ॥ १०२॥

श्रीमच्चन्द्रकलायाश्च वीणाविद्यामथाभ्यसत् ।
अति शीघ्रतया सर्वा विद्या प्राप्ता कलावती ॥१०७॥
वीणावतीति विख्याता साऽयातारासमण्डले ।
रूपेणैकेन सा नित्यं रमते राम सन्निधौ ॥ १०८ ॥

अर्थः—हे श्रीराम-वल्लभे ! आप कृपा कर वीणावाद्य का अलौकिक रहस्य प्रदान कर मेरे मन का सन्ताप नष्ट कर दें ॥ ६२ ॥

फिर श्रीनारदजी बोलेः -हे श्रीसर्वेश्वरीजू ! आप ही कृपा कर युगल मन्त्रराज का उपदेश सम्बन्ध-भावना अष्टया-मादि रहस्य प्रदान करें ॥ १०० ॥

यह सुनकर कृपा की साक्षात् मूर्त्ति सर्वेश्वरी श्रीचन्द्र-कलाजी ने स्वयं कृपाकर युगल मन्त्रोपदेश सम्बन्ध भावना, सर्वरस सार शृङ्गाररस का गोपनीय रहस्यादि सब विधि-पूर्वक प्रदान किया ॥ १०२ ॥

श्रीचन्द्रकलाजू की कृपा से नारदजी ने वीणा-विद्या का अभ्यास किया और शीघ्र ही समस्त कलापूर्ण वीणा-वादन विद्या से सम्पन्न हुये । रास मण्डल में वीणावती सखी के नाम से प्रख्यात हुये । तब से एक रूप से देवर्षि नारद सदा-सर्वदा श्रीसीतारामजी का सानिध्य सुख भोगने के लिवे वहाँ रहते हैं ॥ १०७--१०८ ॥

श्रीसीतायनजी के जयमाल कांड के द्वादश मधुरता में ग्रन्थकार स्वामी श्रीराम-प्रियाशरणजी श्रीमिथिलेश राज-नन्दिनीजू की षष्ट सखियों के नाम इस तरह गिनाते हैं:—

दोहा– षष्ट सखी नामावली, ताको कहौं बुझाय।
जो इनमें अनुराग कर, तेहि सिय पद दर्शाय॥

* चौपाई *

अह्लादिनी अह्लाद सरूपा । सहजानन्दिनि परम अनूपा॥
मदन मंजरी सुख की खानी । चन्द्रकला आनन्द रसदानी॥
चन्द्रावती सकल गुण ऐनीं । चन्द्रमुखी ई छवो मृदुवैनी ॥"

फिर प्रीतम रघुनन्दनजू के पक्ष की षष्ट सखियों के नाम गिनाते हैं:—

"लक्ष्मणा शुभलक्षण सागरि । अह्लादिनि दुहुँओरउजागरि॥
चारुशीला वरशीलसोहावनि । अतिशीलाछविसागरिपावनि॥
सुशीला सब गुणकी खानी । हेमा छवि नहिं जातबखानी ॥"

इनके मत से सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजू प्रिया-पक्ष की आनन्दरस दात्री सर्व प्रधाना सखी हैं। ग्रन्थ में इस तरह कई स्थलों पर इसी क्रम से प्रिया पक्ष और प्रीतम-पक्ष की इन षष्ट सखियों की सेवा का वर्णन है (श्रीकरुणासिंधुजी महाराज ने भी इस तरह प्रिया-पक्ष की षष्ट सखियों में ही सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी का नाम गिनाया है)।

श्रीकरुणासिंधुजी महाराज :-

(स्वामी श्रीरामचरणदासजी):—

श्रीकरुणासिंधुजी महाराज ने श्रीप्रिया-पक्ष की षोड़स, अष्ट, षष्ट सखियों में से षष्ट सखियों में ही सर्वेश्वरी श्री-चन्द्रकलाजी का नाम प्रधान रूप से बताया है:—

देखिये श्रीकरुणासिंधुजी महाराज [अनन्त श्रीराम-चरणदासजी, टीकाकार, श्रीरामचरित-मानस] की टीका [श्रीराम-चरित-मानस की]:—

"चली ल्याइ सीतहिं सखी सादर सजि सुमंगल भामिनी।
नव सप्त साजे सुन्दरी सब मत्त कुंजर गामिनी ॥"

बाल काण्ड-विवाह-प्रसङ्ग के अर्थ में महाराज ने श्री-युगल सरकार की षष्ट, अष्ट, षोड़स सखियों के नाम गिनाये हैं। जिसमें श्रीमिथिलेश राजनन्दिनी जू की षष्ट तथा प्राण-प्रीतम श्रीरघुनन्दनजू की षष्ट सखियों के नाम इस प्रकार हैं। श्रीराजकिशोरीजू की षष्ट सखियों के नाम:—

द्वौदिशि आह्लादिनी, सहजानन्दिनी, मदनमञ्जरी, चन्द्रकला, चन्द्रवती और चन्द्रमुखी।

श्रीरघुनन्दनजू की षष्ट सखियों के नाम:—

द्वौदिशि आह्लादिनी, चारुशीला, अतिशीला, सुशीला, हेमा और लक्ष्मणा।

विवाह-प्रसङ्ग के अलावे 'सती-मोह' के--

"सती विधात्री इन्दिरा, देखी अमित अनूप ।
जेहि जेहि वेष अजादि सुर, तेहि-तेहि तन अनुरूप ॥"

की टीका में तथा उत्तर काण्ड के---

"सासुन सादर जानकिहिं, मज्जन तुरत कराइ ।
दिव्य वसन वर भूषण, अंग-अंग सजे बनाइ ॥"

दोहा की टीका में भी महाराज ने दोनों सरकार की षष्ट सखियों के नाम गिनाये हैं। जिनमें आह्लादिनीजी को दोनों तरफ रक्खा है और चन्द्रकलाजी को प्रिया--पक्ष में। यथार्थतः श्रीआह्लादिनीजी भी श्रीचन्द्रकलाजी ही हैं। कारण, आह्लादकारी गुण चन्द्रमा का है और फिर जिनकी कला से चन्द्रमा जायमान होते हैं, उनके लिये तो कहना ही क्या है? इस प्रकार पूर्वाचार्यों की तरह श्रीकरुणासिंधुजी महाराज ने भी श्रीचन्द्रकलाजी को प्रिया-पक्ष की सखी तथा श्रीचारुशीलाजी को प्रीतम-पक्ष की सखी माना है और प्रिया--पक्ष की होने के नाते श्रीचन्द्रकलाजी की विशेषता प्रगट की।

❀ श्रीरसिक-अलीजी महाराज ❀

अनन्त श्रीकरुणासिंधुजी महाराज के कृपा पात्र श्री-रसिकअलीजी महाराज ने अपने 'श्रीसीताराम-रस-चन्द्रोदय' नामक ग्रन्थ में श्रीमती श्रीचारुशीलाजी के साथ ही सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी की वन्दना की है तथा बाद में और सखियों की। यथाः—

"वन्दे श्रीचारुशीलायाः पाद युग्मस्य रेणुकां कृपया प्राप्यते यस्याः जानक्याः पाद सेवनम् । कलायाश्चन्द्रमा यस्या जातश्चंद्रकलेतितां नमाम्यहम् ।।"

अपने 'जिज्ञासा--पंचक' नामक ग्रन्थ में दास्य, वात्सल्य, सख्य और शृङ्गाररसाचार्यों के नाम लिखने के क्रम में महा--राज स्पष्ट लिखते हैं :---

"शृंगार रसस्याचार्य्यः-श्रीचारुशीला श्रीचन्द्रकलाद्याः सख्यः सर्वा ।"

अर्थात् शृङ्गाररस की श्रीचन्द्रकला तथा श्रीचारुशीला-जी प्रधान आचार्य्या हैं।

श्रीरसिकअलीजी ने और पूर्वाचार्यों के सिद्धान्तानुसार अनन्त श्रीअग्रस्वामीजी महाराज को रसिक परमाचार्य माना है और इनको सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी का अवतार बताया है। यथा:---

श्लोकः-श्रीजानक्या वयस्याहिनाम्ना चन्द्रकला शुभा ।
तस्याऽवतारो लोकेऽस्मिन अग्रदासेति विश्रुतः ।।१४।।
येन श्रीरामसीतोक्ता शृंगार रस सम्प्रदा ।
सम्बन्ध भेदभावेन भक्तेषु प्रगटी कृता ।।१५।।
भक्तानामाग्रणी भावैः ललितैर्रामसीतयोः ।
वयस्या रूपमाश्रित्य नित्यं सेवासुतत्परः ।।१६ ।।

अतएव अग्रदासेति विख्यातो सज्जनैश्च यः ।
तं वन्दे परमाचार्यं सीताराम रसाश्रयम् ॥ १७॥

[श्रीरसिक-अलीजी कृत- श्रीसीताराम रस चन्द्रोदय]

श्रीमिथिलेश-राज-नन्दिनी श्रीजानकीजी की सखी जो श्रीचन्द्रकला नाम की हैं, उन्हीं के अवतार श्रीअग्रदासजी कर के लोक में विख्यात हैं ॥ १४ ॥

जिनसे श्रीसीतारामजी के शृँगाररस सम्प्रदाय का सम्बन्ध भेद-भाव द्वारा उपासकोंके बीच प्रचार हुआ है ॥१५॥

जो श्रीअग्रस्वामीजी महाराज श्रीसीतारामजी के शृँगार भाव से सम्पन्न भक्तों के अग्रगण्य हैं और सखी रूप धारण कर नित्य सेवा में तत्पर रहते हैं ॥ १६ ॥

अतएव, श्रीअग्रदासजी करके जो संतों के बीच विख्यात है, श्रीसीतारामजी के शृँगार रस-राज के उन परम रसिकाचार्य की मैं [श्रीरसिक-अलीजी] वन्दना करता हूं ॥ १७ ॥

सच्चिदानन्द ब्रह्म दाशरथी रामचन्द्र,
सागर में सेतु बान्ध्यो कीन्हों सुर काज हैं।
सोई अवतार कलिकाल रामानन्द स्वामी,
कीन्हों भव सागर में सेतुभक्ति आज है॥
तिनहीं के वंश सीताराम रस प्रगट हित,
'चन्द्रकलाजू' को अवतार अग्रराज हैं।
अग्रजू के वंश अवतंश 'रसिका' अवतार,
गायो रस ललित सिगार सिरताज हैं॥

श्रीयुगल--प्रियाजी महाराजः—

सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी का सर्वेश्वरीपना स्वामी श्री-युगल-प्रियाजी महाराज की वाणियों में यत्र-तत्र स्पष्ट है। यथाः---

[श्रीयुगल-प्रिया-पदावली से]

अब मोहि चन्द्रकलाजू की आशा।
जनकललीजू की मुख्य सहेली विहरति सकल विलासा॥
चौरासी भव फंद छोड़ा के रसिकन संग दियो वासा।
'युगल प्रिया' अब नहिं कछु शंसय विपिन प्रमोद निवासा॥

भोरे श्रीचन्द्रकला अलबेली वीन बजाई प्यारी।
विमलादिक निज कुञ्ज-कुञ्ज ते आनि जुरी इक सारी॥
कनक-निकुञ्ज भवन पलंगा पै पौढ़े युगल-विहारी।
उठि अलसात जम्हात रंगभरि अंखिया सुरति खुमारी॥
विपुल थार सेवा सौजनि करकंजनि मंजु सुधारी।
अग्र-भाग श्रीअग्र–सहचरी युगल प्रिया बलिहारी॥

कांचन बन कमला के तीर रंग होरी साज सजाई।
चलिये श्रीरघुवंश लाड़िले जनकललीजू बुलाई॥
सुनत उठे लालन छवि छाके धरि गलभुज मुसुकाई।
चन्द्रकलाजू के भाग्य विभव लखि शची रमा ललचाई॥

होरी धूम मचो मिथिलापति के दरबार।
रही बरात मास फागुन लौं नित नई होत बहार॥···

.........चन्द्रकला अलबेली मुदित यक दोउ दिशि मिलि उपचार......राम चरण रसिकेश लखाई युगल प्रिया रस–सार ॥

अवध लखि जन्म सुफल करिहौं । सरयू छवि हिय धरिहौं ॥
.........युगल प्रिया है चेरी चन्द्रकला जू की नेरी
अभय करि दोउ प्रिय मिलाय अब काहूकी नहिं डर डरिहौं॥

दोहाः-"याज्ञवल्क्य बोले विहँसि, सत्य गिरा निरधार।"
षष्ट-अष्ट-षोड़स सखी, दल प्रति सेवत ताहि।
षष्टहिं में यह मुख्य गनि, ताते षष्टी माहिं ॥२५॥
प्रगट भई छइ चन्द्र गति, चन्द्रकला वर-नाम।
है अनादि ग्रन्थनि लही,सुनि नृपमणि सुखधाम॥२६॥

[श्रीशृङ्गार-रस-रहस्य दीपिका]

आचारज रस रासपथ रसिकवर्य रसिकन सुखद।
रस-बोध-विपुल आनन्द-घन अग्रस्वामि बानी विशद॥
अग्र-स्वामि श्रीअग्र-सहचरी जनकलली की।
पुष्प-वाटिका मिलन हेतु प्रिय भाँति भली की॥
चन्द्र-कला प्रिय-नाम श्याम सिय बश करि राखी।
प्रगटि स्वामि पद लही ध्यान रस मन मन चाखी॥

[श्रीरसिक-प्रकाश भक्तमाल]

महाराज ने अपना स्पष्ट सिद्धान्त बता दिया है।

स्वामी श्रीयुगलानन्यशरणजी महाराजः—

सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी के लिये महाराज अपनी वाणी में कहते हैं:—

श्रीचन्द्रकला सुख खानी ।
प्रगटी प्रेमा परम पावनी मूरति छवि गुनखानी ॥
माधव मास मंजु मंगलमय मोद प्रमोद सुछानी ।
रसिकवर्य्य रसराज आर्य पर रहसाचार्य प्रधानी ॥
योग युक्ति युगवति जन जिय की जीवन 'युग्म' सुजानी ॥
चन्द्रकला सब विधि सुखकारी ।
श्रीसम्पन्न सीम सौन्दर्या सकल भाँति सौभाग्य सवांरी ॥
परमाचार्य पूज्यता त्रिभुवन अग्रगण्य अलियन सरदारी ।
सिय तद्रूप सरूप सलोनी छवि गुण खानि अनूप उदारी ॥
रहसज्ञा रसदा रस सागरि रमवति रसिया राम विहारी ।
चन्द्रभानु कुल कुमुद प्रफुल्लित चन्द्रप्रभा भव२ उजियारी॥
विगत कलंक मयंक दिव्यद्युति सुख उमड़ात निशंक निहारी ।
युगन २ जियो जनकदुलारी 'युग्म' सजीवन प्राण पियारी॥

स्वामी श्रीजानकीवरशरणजी महाराजकी वाणी

चन्द्रकला गुण ज्ञान निराली ।
जनकलली की अलीशिरोमणि प्रीति सु रीति सदा प्रतिपाली ॥······सोइ अह्लादिनि रूप प्रगटानी चन्द्रभानु

घर घर खुशहाली ।...(श्री) जानकीवर अनुराग भाग की प्रीति लता विकसी बर लाली ॥

जय श्रीचन्द्रकला ठकुरानी ।
परमैश्वर्या वैधी विज्ञा रागानुगा प्रधानी ॥ सिय अनुजा प्रिय अग्र गामिनी स्वामिनि रुख पहिचानी । मधुर केलि मुग्धन मन मोदक मधुरी छवि अरुझानी । सुर-पादप प्रिय पाय प्रमोदक 'प्रीति-लता' लपटानी ॥

स्वामी श्रीराम-बल्लभाशरणजी महाराजः—

स्वामी श्रीराम-बल्लभाशरणजी महाराज अपनी वाणी में आचार्य-निष्ठा प्रगट करते हैं:—

[श्रीयुगल विहार पदावली से]

१—"श्रीचन्द्रप्रभा की मनोरथ वेली सबही विधि सुख खानी ।...अमित सखी श्रीसिय स्वामिनि की तिनमें मुख्य सहेली ॥...इनकी कृपा होइहहि जिन पर सिय पिय बाहि हथेली । श्रीयुगल विहारिनि युगल विहारी मिलि निश वासर होइहहिं केली ॥"

२—आज जन्म श्रीचन्द्रकला को । परमाचार्य सकल यूथेश्वरि प्रियाप्रीतम विहार कुशलाको ॥ श्रीस्वामिनि सिय-छठी दिवस रवि मंगल निधि उमड़यो मिथिला को ॥...

युगल विहार अपार विहारिनि चन्द्रकला अली अवध लला को ॥

पंडित शिरोमणि स्वामी श्रीरामवल्लभाशरण-जी (श्रीजानकीघाट) महाराज की वाणीः—

[कौशल खंड की टीका के मंगलाचरण में]

१—जयति शक्ति सर्वेश्वरी, चन्द्रकला गुनखानि।
दायिनि प्रेम प्रसाद की, रंक जिवावनि वानि ॥

२—सखिन शिरोमणि चन्द्रकले, तोहि बिनवों कर जोरि।
रसमय बुद्धि देहु मोहि, वरणौं रहस हलोर ॥

इनकी रसाचार्या सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी ही हैं, जिसका स्पष्ट वर्णन इनकी जीवनी में आया हैः—

दोहाः- "सिंहासन पै लसतु हैं, युगल नवल सरकार।
दम्पति के परिकरन की, दुहुँदिशि लगी कतार ॥

छवि निहारि यह अतिसुखकारी। भयो हर्ष श्रीगुरु हियभारी॥
पाहि २ अस शब्द उचारी। परे दण्ड इव सुरति बिसारी॥
तेहि अवसर स्वामिनि रुखपाई। चन्द्रकलाजू गुरू पहँ आई॥
करगहि वरवश तिनहिंउठाये। श्रवणामृत असवचन सुनाये॥
हे गुण अयन धैर्य्य हियधरिये। चलि समीपमें दर्शन करिये॥
असकहिकरगहि अतिसचुपाई। नवलयुगलढिगतिन कहँ लाई॥

श्रीरामस्नेहिदासजी विरचित
श्रीजानकी--चरितामृत सेः—

श्रीसीतारामावूचतुः--

श्लोक-चन्द्रा चन्द्रकला ज्येष्ठा पूज्या ध्येयेष्टदावरा ।
सर्वेश्वरी ध्यानगम्या आचार्यैका च देशिका ॥२४॥
द्वादशैतानि नामानि तव नित्यं पठन्ति ये ।
त्रिसन्ध्यमेकसन्ध्यं वा यान्ति ते परमं पदम् ॥ २५॥
आवां परमसन्तुष्टावनेनाद्भुत कर्मणा ।
भृशं चन्द्रकले ! बिद्धि त्वयि चन्द्रोपमानने ॥ २६ ॥
सखीनामपि सर्वासां प्रधानानामुरीकुरू ।
आवयोराज्ञयेदानीं मुदा सर्वेश्वरी पदम् ॥ २७ ॥
यतस्त्वमेव सर्वासां कारणं प्रथमं स्मृता ।
संगृहाणावयोर्दत्तमतः सर्वेश्वरी पदम् ॥ २८ ॥
निर्विकारान्विता बुद्धिरावयोः प्रीति साधनम् ।
नित्यमस्तु गृहाणेदं मुदा सर्वेश्वरी पदम् ॥ २९ ॥

[अध्याय ३६ श्लोक २४ से २९ तक]

अर्थः—श्रीयुगल सरकार श्रीसीतारामजी ने सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी से कहा:--

हे श्रीचन्द्राजी, श्रीचन्द्रकलाजी, ज्येष्ठाजी, श्रीपूज्याजी, श्रीध्येयाजी, श्रीइष्टदाजी, श्रीवराजी, श्रीसर्वेश्वरीजी, श्रीध्यान-गम्याजी, श्रीआचार्याजी, श्रीएकाजी, श्रीदेशिकाजी ॥ २४ ॥

आपके इन द्वादश नामों को जो नित्य तीनों सन्ध्याओं में अथवा एक ही सन्ध्या में पाठ करते हैं, वे परम पद को प्राप्त करते हैं ॥ २५ ॥

हे चन्द्र के समान मुखवाली श्रीचन्द्रकले ! इस आश्चर्य जनक कर्त्तब्य से हम दोनों को अपने प्रति परम प्रसन्न जानिये ॥ २६ ॥

अतः हम दोनों की आज्ञा से प्रसन्नता पूर्वक इस समय आप समस्त मुख्य सखियोंका सर्वेश्वरी पद, स्वीकार करें ॥२७

क्योंकि सभी सखियों की मुख्य कारण आप ही हैं। अतः हम दोनों के दिये हुए, इस सर्वेश्वरी पद को आप सब प्रकार से ग्रहण कीजिये ॥ २८ ॥

आपकी बुद्धि अभिमान आदि, विकारों से रहित हम दोनों की सदा प्रसन्नताकारक होवे, अतः यह सर्वेश्वरी पद प्रसन्नता के साथ आप ग्रहण कीजिए। २६ ॥

श्रीशिवोवाचः---

श्लोकः-इत्थं दत्त्वा वरं तस्यै नित्यापारसुखा कृती।
अन्तरङ्गा तदा लीलां कुर्वन्तौ ययतुर्मुदम् ॥

[अध्याय ३६ श्लोक ३०]

अर्थः---भगवान् शिवजी बोले---हे पार्वती ! इस प्रकार सुख स्वरूप, वे श्रीयुगल सरकार श्रीचन्द्रकलाजी को विकार रहित बुद्धिपूर्वक सर्वेश्वरी पद का बरदान प्रदान करके अन्तरङ्ग लीला करते हुए, प्रसन्नता को प्राप्त हुए ॥ ३० ॥

प्रोफेसर श्रीभुवनेश्वर मिश्र 'माधव'

[श्रीराम भक्ति साहित्य में मधुर उपासना के रचयिता]

'माधव' अपने 'श्रीराम-भक्ति साहित्य में मधुर उपासना' नामक ग्रन्थ के पृष्ठ नं० ११० पर लिखते हैं:--

शृँगार राज्य में प्रवेश पाने के लिये श्रीविदेहराज कुमारीजी की अंतरंग सखियों की कृपापूर्ण दृष्टि अनिवार्य्य है। यहाँ किसी साधना या अनुष्ठान से प्रवेश ही नहीं हो सकता। अस्तु इन अन्तरंग सखियों में मुख्य हैं:---

श्रीचन्द्रकला, श्रीविमला, श्रीसुभगा, श्रीमदनकला, श्री-चारुशीला, श्रीहेमा, श्रीक्षेमा, श्रीपद्मगन्धा, श्रीलक्ष्मणा, श्री-श्यामला, श्रीहंसी, श्रीसुगमा, श्रीवंशध्वजा, श्रीचित्रलेखा, श्री-तेजोरूपा और श्रीइन्द्रावली ये सोलह मुख्य यूथेश्वरी हैं।

इन सोलहों में श्रीचन्द्रकला, श्रीचारुशीला, श्रीमदनकला और श्रीसुभगा मुख्य हैं और इनमें श्रीचन्द्रकलाजी सर्वश्रेष्ठ हैं। वाह्यकार्यों में जैसे श्रीभरतलालजी का स्वतन्त्र सर्वाधिकार है, अन्तरंग लीलाओं में उसी प्रकार श्रीचन्द्रकलाजी प्रधानता में सर्व श्रेष्ठ हैं। श्रीचन्द्रकलाजी राम-रस की आचार्या हैं और इन्हीं की कृपा से साधक अपने सिद्ध-देह से इस लीला में प्रवेश पाते हैं।

श्रीकनक भवन का रोमाञ्चकारी इतिहासः—

'श्रीकनक भवन का रोमाञ्चकारी इतिहास' नामक ग्रन्थ के लेखक 'श्रीरामगोपाल पाण्डेय' [शारद] ग्रन्थ के पृष्ठ नं० २०३ पर लिखते हैं:---

श्रीमिथिलेश राजकिशोरीजी की नित्य सहचरियों की संख्या भी आठ हैं तथा उनकी सहायिका सहचरियों की संख्या भी आठ हैं। इनकी प्रधान सहचरी तथा समस्त सहचरियों की यूथेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी हैं।

श्रीराजकिशोरीजी:—	सेवा
१----प्रधान सहचरी सर्वेश्वरी प्रमुख, यूथेश्वरी पराचार्या श्रीचन्द्रकलाजी,	नृत्य, गायन, बादन तथा संगीत कुशलता से श्रीप्रियाजी को रिझाना।

ग्रन्थ के पृष्ठ नं० २२६ पर फिर लिखते हैं कि:---

श्रीभरतलालजी श्रीहनुमन्तलालजी आदि सभी इस महल में भगवान आदि पुरुष की सभी सेवायें नारी रूप में ही करते हैं :----

श्रीभरतलालजी	श्रीचन्द्रकलाजी
श्रीहनुमन्तलालजी	श्रीचारुशीलाजी

महल की सेवा में श्रीचन्द्रकलाजी तथा श्रीचारुशीलाजी की मुख्य प्रधानता है। दोनों श्रीयुगल सरकार की नित्य सह-चरियाँ तथा मुख्य यूथेश्वरियां हैं।

चतुर्थ–अध्याय।

सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी की प्रधान सेवा--वीणा वादन।

सर्व विद्या विशारदा होने से आप सर्व कलाओं की आचार्या हैं, फिर भी श्रीप्रियाप्रीतमजू के रास--विलास में आपकी प्रधान सेवा वीणा वादन है, जो शास्त्र सम्मत होते हुए सर्व आचार्य सम्मत है।

वन्दे चन्द्रकलां देवीं वीणा-वादन तत्पराम्।
रास वेश्मनि भावज्ञां जानकी प्रेम विह्वलाम् ॥ १ ॥

[श्रीनारद पंचरात्र, नारदोक्त श्रीचन्द्रकलाष्टक]

कुञ्जान्तरे चन्द्रकला वीणावाद्यं मनोहरम्।
मोहनाय परेशस्य पञ्चबाणात्मकं परम् ॥ ३८ ॥
संगृह्य शीघ्रतो देवी रणत्कारं ततोऽकरोत्।
दिशां च विदिशां चैव पूरयामास साध्वनिः ॥ ३९ ॥
स्वर्गं पातालमेवं च भेदयित्वा जगत्त्रयम्।
चेतना चेतनांश्चैव वीणा शब्दो व्यमोहयत् ॥ ४० ॥

[लोमश संहिता, अध्याय २२, श्लोक ३८, ३९, ४०]

अनन्त श्रीअग्रस्वामीजी महाराजः—

सर्वासां सु सखीनां तु प्रेरिकां गुण सागराम् ।
जानक्याः परम प्रेष्ठां कोक–विद्या विशारदाम् ॥१॥
रसिकानामाचार्यां तां वीणा वादन तत्पराम् ।
दम्पत्योः केलि मर्मज्ञां वन्दे चन्द्रकलां सखीम् ॥२॥

गावति चन्द्रकला सिय प्यारी, छवि छकि मतवारी ।
वीण बजावति मधुरे स्वर सों, मधुर ताल सुठिकारी ॥
सुनि जागे सिय प्यारी-प्रीतम आलस भरे खुमारी ।
...चन्द्रकलारूखपाइअग्र-अलीयहसुखझांकतिझांझरिद्वारी॥

श्रीसूर--किशोरजी महाराजः—

श्रीजनकललो मधुरे स्वर गावैं ।
नई-नई तान सुनावैं सहचरि, चन्द्रकला अलि वीन बजावैं ॥
... ... ।
'सूर-किशोर' बलैया लेहीं, कोउ सखि व्याह की बात चलावैं ॥

श्रीबालअलीजी महाराजः—

"रस विलसत प्रीतम सुखहिं, चिरनिशि चाह प्रवीन ।
चन्द्रकला चन्द्रहिं निरखि, मधुर यन्त्र स्वर कीन ॥"

[नेह–प्रकाश]

श्रीराम--सखेजी महाराजः—

नटत राम नागर–नागरिया ।
श्रीचन्द्रकला कल वीन बजावत गावत चन्द्रवती सह-चरिया ॥......श्रीराम सखे दम्पति लीला रस लखि २ दृगन प्रेम उर भरिया ॥

श्रीरामप्रियाशरणजी महाराजः—

[श्रीसीतायणकार]

श्रीनारदजी की उक्ति श्रीजनकजी के प्रति:—

"चन्द्रकला जो वीन बजाई । सबके मन अभिलाष पुराई ॥
तहँ मोहि वीन बजावनआई । चन्द्रकला मोकहँसिखलाई॥"

[श्रीसीतायणजी, जयमाल--काण्ड, चतुर्थ मधुरता]

श्रीकरुणा-सिंधुजी महाराजः—

देखो सखि अति अनन्द रास रच्यौ रामचन्द्र रजनी छवि छिटकि रही शरद-चांदनी ॥......चन्द्रकला वीणा मुचङ्ग धुनि मृदङ्ग,मधुर,अपर सखि सितार तार तर तरंगिनी। ...श्रीराम-चरण युत् समाज मेरे हिय में विराज यह विहार नित अखण्ड रसिक मंडनी ॥

श्रीयुगल--प्रियाजी महाराजः—

भोरे श्रीचन्द्रकला अलबेली वीण बजावति प्यारी।
विमलादिक निज कुञ्ज २ तें जुरि आईं इक सारी ॥
विपुल थार लिये सेवा सौजनि कर कंजों में सुधारी।
अग्र भाग श्रीअग्र सहचरी श्रीयुगल-प्रिया वलिहारी ॥

जय श्रीचन्द्रकला अलबेली।
······मोहनि यन्त्र वीण स्वर टेरति प्रीतम चित्त विथैली ॥
शरणागत पालिनि रस मालिनि चालिनि गज गति हेली।
श्रीयुगल-प्रिया अनुराग सदा सम्बन्ध राग की मेली ॥

वीन बजाई चन्द्रकला, चन्द्रव्रतीजू गाय।
कसी रसी गति मृदङ्ग की, परन प्रणाली छाय ॥

[श्रीयुगल-प्रियाजी कृत--शृङ्गार-रस रहस्य दीपिका]

इसी ग्रन्थ में आगे फिर श्रीचन्द्रकलाजी के लिये लिखते हैं:--

"यन्त्र वर वीण करधारी। रास रस मत्त मतवारी ॥"

इस तरह सर्व कला विशारद होते हुए भी प्रधानतः ये वीणाचार्या ही हैं।

पंचम अध्याय।

निमिवंश में प्राकट्यः—

श्लोकः-स्वर्णरोम्नस्तु राजर्षेः पुत्रः सुव्रतसंज्ञकः।
तस्यभार्याच श्रीभावा तयोः पुत्रः प्रतापवान् ॥२५॥
चन्द्रभानुरिति ख्यातः सुशीलः सर्व रञ्जकः।
भार्या चन्द्रप्रभा तस्य साध्वी सर्वगुणालया ॥२६॥

[लोमश संहिता, षोड़स अध्याय, श्लोक २५, २६]

अर्थ—राजर्षि स्वर्णरोमा महाराज के ह्रस्वरोमा और सुव्रत नाम के दो पुत्र हुये। ह्रस्वरोमा महाराज के पुत्र शीरध्वज महाराज हुये तथा श्रीसुव्रत की भावा नाम की भार्य्या से चन्द्रभानु नामक एक प्रतापी पुत्र हुये। उन्हीं सुशील सर्व प्रिय चन्द्रभानुजी महाराज की सर्व गुणोदय परम साध्वी चन्द्रप्रभा नाम की भार्या हुई॥ ५॥ २६॥

श्लोकः-चन्द्रभानुगृहे रम्ये महार्हे मणिचित्रिते।
चन्द्रप्रभायामुत्पन्ना कन्या कल्याणदा सताम् ॥ ६॥
दिव्य लक्षण सम्पन्ना प्रसन्ना कंजलोचना।
स्वयैव प्रभयाकामं भासयन्त्यखिलं जगत् ॥ १०॥

[लोमश संहिता, अध्याय १७, श्लोक, ६, १०]

अर्थः—उस पुण्य वेला में रत्नमणिमंडित महाराज चन्द्रभानु के घरमें महारानी चन्द्रप्रभा को सज्जनों का कल्याण करने वाली एक कन्या उत्पन्न हुई॥ ६॥

समस्त दिव्य लक्षणों से सम्पन्ना प्रसन्नवदना कमल लोचना वह कन्या अपनी देह कान्ति से ही समस्त जगत को प्रकाशित करने लगी ॥ १० ॥

श्लोकः-अद्भुतेयं सुता राजन् महाभाग्येन ते गृहे।
जाता ब्रह्मादिभिर्देवै र्वन्द्यमान पदाम्बुजा ॥ ३७ ॥
यस्मादाह्लादयेत्येषा महत्या प्रभया स्वया।
पूरयत्यखिलं विश्वमचिन्त्यैश्वर्य वैभवा ॥ ३८ ॥
तस्माच्चन्द्रकलेत्यस्या नामसिद्धं पुरातनम्।
सर्व सिद्धिकरं नृणां जपतां काम भूरुहम् ॥ ३९ ॥
य एतस्यां महाभागा प्रीति कुर्वन्ति मानवाः।
भुक्ति मुक्ति परां सिद्धिं लभन्ते नात्र संशयः ॥ ४० ॥
पराभक्ति रसास्वाद दात्रीयं चरणार्चिनाम्।
नाना केलिरसाभिज्ञाचार्या चातुर्य्य मण्डिता॥४१॥
सर्वेषामपियूथानामीश्वरीयं भविष्यति।
अतः सर्वेश्वरीख्याता सखीनां भुवनत्रयम् ॥ ४२ ॥

अर्थः—श्रीयाज्ञवल्क्यजी महाराज श्रीचन्द्रभानुजी महाराज से कहते हैं कि हे राजन्! वास्तव में परम अलौकिक यह कन्या महान् भाग्योदय के फल स्वरूप तुम्हारे घर में प्रगट हुई है, ब्रह्मादिक देवताओं द्वारा इनके चरण कमल सदैव पूजित होते हैं ॥ ३७ ॥

यह आपकी कन्या महानप्रभा से समस्त विश्व को आह्लादित करती है ॥ ३८ ॥

इसलिये इनका यह श्रीचन्द्रकला नाम सनातन प्रसिद्ध है। सर्व समृद्धि चाहने वालों को कल्प वृक्ष की भांति कामना सिद्ध करने वाली हैं ॥ ३६ ॥

जो कोई महाभाग्यवान इनके चरणों में प्रीति करेंगे वे मनुष्य भुक्ति मुक्ति तथा परम सिद्धि प्राप्त करने में समर्थ होंगे, इसमें कोई संशय नहीं है ॥ ४० ॥

अपने चरणोपासकों को पराभक्ति का रसास्वादन कराने वाली नाना विधि केलि कौतुक में निपुण-चतुरता का भंडार तथा शृँगार रस की आचार्य्या यह आपकी कन्या होगी ॥४१॥

समस्त सखियों की यूथेश्वरियों की यह ईश्वरी होगी। इसलिये तीनों भुवन सखी समाज में यह 'सर्वेश्वरी' नाम से प्रसिद्ध होंगी ॥ ४२ ॥

निमिकुल नन्दिनी श्रीमिथिलेश राजकिशोरी-जू की बहनों के नाम—

(१) श्रीचन्द्रकलाजी (२) श्रीसुषमाजी (३) श्रीपरमाजी (४) श्रीरतिवर्द्धिनीजी (५) श्रीमोदिनीजी (६) श्रीतरंगाजी (७) श्रीउमंगाजी (८) श्रीमाधुर्याजी (९) श्रीविहारिणीजी (१०) श्रीश्रुतिकीर्तिजी (११) श्रीमाण्डवीजी (१२) श्री-उर्मिलाजी (१३) श्रीसीताजी (१४) श्रीचारुशीलाजी (१४) श्रीक्षेमाजी (१६) श्रीवरारोहाजी (१७) श्रीपद्म-गंधाजी (१८) श्रीशुभगाजी (१९) श्रीलक्ष्मणाजी (२०) श्रीहेमाजी। (देवल--संहिता)

देवल संहिता के ही आधार पर श्रीसूरकिशोरजी महाराज ने अपने 'श्रीमिथिला विलास' नामक ग्रन्थ में सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी का प्राकट्य बतलाया है।

बजत बधाई आज महल में प्रगटी चन्द्रकला सखि अगरी।
परमेष्ठी सखि जनकललो की सकल कला गुणमें अति नगरी ।।
चन्द्रप्रभाजीकी तप की मूरति आचारज रसिकन कुल सगरी।
...जाके विभव शेष नहिं कहि सक कहे एक मुख'अग्र'कस करी

[श्रीअग्र-स्वामीजी महाराज]

जै श्रीचन्द्रकला अलबेली ।
अति सुकुमारि रूप गुण आगरि नागरि गर्व महेली ।।
निमिकुल प्रगटि संग सिय प्यारी प्रियकारी रसकेली।...
श्रीयुगल प्रिया अनुराग सदा सम्बन्ध राग की मेली ।।

[श्रीयुगल-प्रियाजी महाराज]

दोहाः- चाचा श्रीमिथिलेश के, नृपवर सुव्रत राव ।
भक्ति भाव गुण आगरी, रानी भावा नाव ।।
पुत्र प्रवर तिनके भये, अविरल रति को धाम ।
चन्द्रभानु तिय सुन्दरी, चन्द्रप्रभा जेहिनाम।।...
जेहि दिन छट्ठी लली को, भली भई उत्साह ।
तेहि दिन चन्द्रकला कुवँरि, प्रगटी उत्सव माँह ।।

[श्रीयुगल-प्रियाजी कृत "शृङ्गार-रस-रहस्य-दीपिका"]

मूल—"वन प्रमोद महली प्रिया मिथिला कुञ्ज उपासिनी।
श्रीविमला अरु चन्द्रकला श्रीचारुशीला अलि।
चन्द्रवती चन्द्रादि और शीला सुशील भलि॥
कमला कमल मुखी अनूप विशदा सुखदानी।
पद्मा पद्मिनि चम्पकली रतिवर्द्धिनि मानी॥
प्रियकेलि कलाविद पंडिता जनककुवँरि सहवासिनी।
वन प्रमोद महली प्रिया मिथिला कुंज उपासिनी॥"

टीका—भ्राता चारि मूल में विदित ग्रन्थकार कहे,
और निमिवंशी अष्टभ्राता सुखदानी हैं।
वात्सल्य भाव में मगन उन्मत्त सबै,
जिनके निहारे जग-वासना हिरानी हैं॥
तिनहींके भवन चारुशीला चन्द्रकला आदि,
सियाजू की मुख्य सहचरी प्रगटानी हैं॥"
[श्रीरसिक प्रकाश भक्तमाल]

श्रीजानकी-चरितामृत से:—

श्लोकः- महिषी श्रीचन्द्रभानोर्नाम्ना चन्द्रप्रभा चैव।
जानक्याः पार्श्वस्था चन्द्रकला नामिकापुत्री॥३३॥
[अध्याय ८, श्लोक ३३]

अर्थः—श्रीचन्द्रभानु महाराज की महारानी श्रीचन्द्रप्रभा नाम से प्रसिद्ध हैं। उनकी पुत्री श्रीजनक-दुलारीजू के साथ चलने वाली श्रीमती चन्द्रकलाजी हुईं॥ ३३॥

षष्टम अध्याय।

सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी और महामहिम श्रीभरतलालजी की अभिन्नता।

आर्ष ग्रन्थ 'श्रीरहस्य रामायण' का प्रमाण है:—

श्लोकः- "लक्ष्मणा लक्ष्मणं प्रोक्त' भरतश्चन्द्रकलातथा।
शत्रुघ्नो सुभगा याता चारुशीला तु मारुतिम्॥"

अर्थः—श्रीलक्ष्मणाजी श्रीलक्ष्मणकुमार हैं। श्रीचन्द्रकलाजी श्रीभरतकुमार हैं। श्रीसुभगाजी श्रीशत्रुघ्न कुमार हैं और श्रीचारुशीलाजी श्रीहनुमन्तलालजू हैं।

सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी और श्रीभरतलालजी को श्रीअग्रस्वामीजी महाराज भी अपने 'श्रीअग्र रहस्य चन्द्रिका' नामक ग्रन्थ में अभिन्न बताते हैं। यथा: —

श्लोकः-सीताराम कृपामूर्त्तिः ज्ञेया च चन्द्रकलाभिधा
यूथेश्वरीषु पूज्या या सा भरतोऽभूद्वाह्यके भवत्॥
"चारुशीलापि विज्ञेया महत्यूथेश्वरी खलु"
चारुशील मणिः सख्ये दास्ये च हनुमान्कपिः।
लक्ष्मणा लक्ष्मणःसाक्षात् शत्रुघ्नः सुभगाभवत्॥१८२

अर्थः—श्रीसीतारामजी की कृपामूर्त्ति जो श्रीचन्द्रकला नाम से प्रसिद्ध हैं और यूथेश्वरियों में सर्वपूज्या हैं। श्रीचन्द्र-

कलाजी श्रीभरतलालजी हैं। श्रीचारुशीलाजी जो महायूथेश्वरी हैं, सख्य भाव में श्रीचारुशीलमणिजी हैं और दास्य भाव में श्रीहनुमानजी हैं। श्रीलक्ष्मणाजी श्रीलक्ष्मणजी और श्रीसुभगाजी श्रीशत्रुघ्न कुमार हैं।

श्रीजानकी चरितामृत में:—
सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी और श्री-भरतलालजी का ऐक्य:—

श्लोकः-तयोर्ज्ञात्वा मनोभावं द्रुतं चन्द्रकला स्वयम्।
वभूव तर्हि भरतो लक्ष्मणा लक्ष्मणोऽभवत् ॥३२॥
ततः कमलपत्राक्षी शत्रुघ्नः सुभगाऽभवत्।
सर्वाः सख्योऽभवन्सद्यः पार्षदा हनुमन्मुखाः ॥३३॥
तैस्तु साकं मुदा सर्वैः सीतारामौ सतां गती।
वहिरङ्गां शुभां लीलां चक्रतुः कल्मषापहाम् ॥३४॥

(अध्याय ३६, श्लोक-३३-३४)

अर्थः—श्रीयुगल सरकार के इस मनोभाव को जानकर श्रीचन्द्रकलाजी तत्क्षण स्वयं श्रीभरतलालजी बन गयीं और श्रीलक्ष्मणाजी श्रीलषणलालजी हो गयीं ॥ ३२ ॥

तत्पश्चात् श्रीकमलदल लोचना श्रीसुभगाजी, श्रीशत्रुघ्नजी और सभी सखियाँ श्रीहनुमंतलालजी आदि पार्षद बन गयीं ॥ ३३ ॥

संतों के परम आधार स्वरूप वे श्रीसीतारामजी उन सब पार्षदों के सहित प्रसन्न होकर समस्त पापों का विनाश करने वाली बहिरङ्ग लीला को करने लगे ॥ ३४ ॥

महाभारतकार भगवान 'श्रीवेद व्यासजी' के वचन से भी यही सिद्ध होता है:—

श्लोकः-विष्णु बीज कृतां मालां यज्ञाङ्गफल सम्भवाम् ।
वशिष्ठेन समाक्षिप्तां विभ्रती जानकी तदा ॥२४॥
ब्रह्म गोलक संघातं विभ्रतीव विराजते ।
वीणां प्रवीणो भरतो वादयञ्जानकीं प्रति ॥२५॥

[महाभारत, अश्वमेध पर्व, अध्याय २६, श्लोक--२४--२५]

अर्थ—श्रीवशिष्ठजी द्वारा अर्पण की हुई विष्णुबीज की माला तथा और मालाओं से मिथिलेश राजनन्दिनी श्री-जानकीजी ऐसी सुशोभित हो रही थीं, मानो ब्रह्माण्ड की शोभा समुदाय को जीत लिया हो और वीणा बजाने में निपुण श्रीभरतलालजी राजनन्दिनी श्रीजानकीजी के समीप वीणा बजाते हुए सुशोभित हो रहे थे ॥ २४ ॥ २५ ॥

सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी अपने वाह्य स्वरूप श्रीभरत-लालजी के रूप में होते हुए भी अपनी सहज सेवा वीणा-वादन श्रीराजकिशोरीजू के प्रति प्रदर्शित कर रही हैं।

श्रीकृपानिवासजी महाराज अपने 'अनन्य चिन्तामणि' नामक ग्रन्थ के 'रोग प्रहरन' नाम द्वितीय गुण में चारों भाइयों के प्राकट्य के सम्बन्ध में लिखते हैं'—

"श्रीदशरथ उर पुत्र भाव धरि ।
यथा भाव-बश सिद्ध करैं हरि ॥
भाव विवश भये चार कुमारा ।
नहिं जोनी गति रति संसारा ॥
प्रगट भये भक्तन सुख कारन ।
औ रसिकन को रस उपजावन ॥
चन्द्रकला ह्वै भरत सुहाये ।
विमला लषन मदन रिपुहाये ॥
श्रीप्रसाद हनुमन्त सु पूरति ।
सिय वल्लभ सुख साहस मूरति ॥

अपने प्रधान ग्रन्थ 'श्रीराम-रसामृतसिंधु' के प्रथम प्रवाह के सप्तम तरंग के अन्त में भी श्रीकृपानिवासजी महाराज लिखते हैं कि:—

"चन्द्रकला विमला मदनकला, सखी अवतार।
कैकेयी एक, सुमित्रा, युग जनमें ता वार ॥"

अर्थात्:—सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी और श्रीभरतलालजी को महाराज ने पूर्ण अभेद बताया।

श्रीलक्ष्मण कोटाधीश अनन्त श्रीस्वामी युगलानन्यशरणजी (जो छोटे-बड़े ८४, चौरासी ग्रन्थों के निर्माता हैं) अपने 'श्रीमिथिला वाटिका-विहार' नामक ग्रन्थ में [जिसमें

श्रीराम-चरित-मानस के फुलवाड़ी प्रसङ्ग का अर्थ महाराज ने लिखा है।]

"चली अग्रकरि प्रिय सखि सोई। प्रीति पुरातन लखे न कोई॥

'चौपाई' के अर्थ में लिखते हैं कि:—

"चली अग्र करि प्रिय सखी"

ये सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी हैं। अतएव ये सखी और श्रीभरतलालजी तत्व करके एक ही हैं और रूपकर के भिन्न हैं। बाह्य सेवा के वास्ते श्रीभरत रूप से हैं और महल सेवा के वास्ते श्रीचन्द्रकला रूप से हैं। जैसे स्वारथ परमारथ श्रीभरतलालजी ने श्रीसरकार में अर्पण किया है, इसी तरह से श्रीचन्द्रकलाजी ने स्वारथ परमारथ स्वामिनीजी में अर्पण किया है। पुराणों में भी लिखा है कि:—

"भरतश्चन्द्रकला तथा"।

श्लोकः-या च चन्द्रकला नाम्नी सर्व-विद्या विशारदा।
सुदक्षा सर्व कार्येषु दम्पत्योः रसवर्द्धिका ॥५२॥
बाह्य कार्येषुप्राधान्यं भरतस्य यथामतम्।
तथान्तरङ्ग लीलासु श्रैष्ठ्यमस्या मनोरमे ॥५६॥

[लोमश संहिता, अध्याय १५, श्लोक ५५, ५६]

अर्थ—सर्व विद्या-विशारदा सभी कार्यों में परम चतुरा दम्पति के रस सुख को बढ़ाने वाली 'श्रीचन्द्रकला' नाम की सखी हैं॥ ५२॥

बाह्य कार्यों में जैसे श्रीभरतलालजी का स्वतन्त्र सर्वाधिकार है, अन्तरङ्ग, लीलाओं में उसी प्रकार श्रीचन्द्रकलाजी प्रधानता में सर्व श्रेष्ठ हैं ॥ ५६ ॥

श्रीमैथिली प्राण वल्लभ प्राण प्यारी सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी में और श्रीसीतारामजी के प्राण प्यारे श्रीभरतलालजी में ऐक्य देखिये ।—

"तुम जानहु कपि मोर सुभाऊ ।
भरतहि मोहि कि अन्तर काऊ ॥"

(श्रीरामचरित मानस)

श्लोकः- विदेहात्मजयाऽद्वैत भावमेषा गमिष्यति ।

(लोमश संहिता, अध्याय १७, श्लोक ४३)

अर्थ- श्रीमैथिलीजी से ये श्रीचन्द्रकलाजी अद्वैत भाव को प्राप्त होंगी अर्थात किसी तरह का भेद नहीं है ।

"राम प्राणहू ते प्राण पियारे ।
तुम रघुपतिहिं प्राण ते प्यारे ॥"

(श्रीरामचरित मानस)

श्लोकः-एषाहि सर्वशक्तीनामीश्वरी गुण मण्डिता ।
प्राणैः प्रियतरानित्यं श्रीसीतारामयोः सदा ॥६॥

(लोमश संहिता, अध्याय १६, श्लोक ६)

अर्थ—सर्व शक्तियोंकी ईश्वरी गुणज्ञा सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी श्रीसीतारामजी की नित्य प्राणों से प्रियतरा हैं ॥ ६ ॥

"सुनहु भरत रघुपति मन माहीं।
प्रेम पात्र तुम सन कोउ नाहीं॥"

[रा० च० मा०]

श्लोकः-मैथिली प्रीतिपात्रत्वात् बैलक्षण्याच्च सर्वतः।
चक्रवर्ति कुमारोऽपि तस्याः साह्यमपेक्षते॥ ५५॥

[लो० सं०, अ० १५, श्लो० ५५]

अर्थः—सभी बातों में विलक्षण तथा श्रीराजकिशोरीजी की परम प्रीति पात्रा होने के नाते श्रीराघवेन्द्र कुमार भी समय-समय पर इनकी सहायता की चाहना करते हैं।

"भरत महा महिमा सुनु रानी।
जानहिं राम न सकहिं बखानी॥"

[रा० च० मा०]

श्लोकः-किं वहूक्तेन ते देवि यथार्थं वच्मि तत्त्वतः।
अस्याः प्रभावं माहात्म्यं रामो वेत्तिनचापरः॥

[लो० सं०, अ० १५, श्लो० ५७]

अर्थ—विशेष क्या? हे देवि! इनका प्रभाव और माहात्म्य श्रीराघवेन्द्रजू ही जानते हैं। दूसरा कोई पूर्णतः नहीं जानता॥ ५७॥

सर्व प्रधान परिकरों की वन्दना में श्रीमद्गोस्वामीजी ने सर्व प्रथम सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी से अभेद श्रीभरतलाल-जी की वन्दना की है।

"वन्दौं प्रथम भरत के चरणा।
जासु नेम व्रत जाइ न वरणा॥"
श्रीराम चरण पंकज मन जासू।
लुब्ध मधुप इव तजहिं न पासू॥"

[श्रीराम-चरित-मानस]

कौशिल्या अम्बा श्रीभरतकुमार के प्रति कह रही हैं:—

"राम प्राणहूँ ते प्राण तुम्हारे। तुम रघुपतिहिं प्राण ते प्यारे॥"

पुनः माता, मंत्री, श्रीगुरु और पुर नर-नारी सब स्नेह में विकल हो कहते हैं:—

"भरतहिं कहहिं सराहि सराही।
राम प्रेम मूरति तनु आही॥"

श्रीनाभा स्वामीजी अपने 'अष्टयाम' में इन्हीं के लिये कहते हैं कि:—

आठ सखी जो मुख्य सयानी।
तिन महँ इक अति चतुर सयानी॥
राम कृपा मूरति धरि रूपा।
सुभग शृंगार बनाय अनूपा॥"

[श्रीनाभा स्वामीजी कृत अष्टयाम]

श्रीभरद्वाजजी की उक्ति श्रीभरतजी के प्रति:—

"सुनहु भरत रघुबर मन माहीं।
प्रेम पात्र तुम सम कोउ नाहीं॥

लखन राम सीतहिं अति प्रीती ।
निशि सब तुमहिं सराहत बीती ॥
तुम तो भरत मोर मत येहू ।
धरे देह जनु राम सनेहू ॥"

सिद्ध, साधु, मुनिवर वचनः—

जड़ चेतन मग जीव घनेरे । जिन्ह चितये प्रभु जिन प्रभु हेरे ॥
ते सब भये परम पद योगू । भरत दरश मेटा भव रोगू ॥
यह बड़ि बात भरतके नाहीं । सुमिरत जिनहिं राम मनमाहीं॥
भरत महामहिमा जलराशी । मुनि मति ठाढ़ि तीर अबलासी॥
गा चह पार यतन हिय हेरा । पाव न नाव न बोहित बेरा॥"

इतना ही नहीं ।

"शोक कनक लोचन मति छोनी ।
हरी विमल गुनगन जगजोनी ॥
भरत विवेक वराह विशाला ।
अनायास उघरी तेहि काला ॥"

प्राण प्रीतम श्रीरघुनन्दनजू के वचन श्रीलखनलालजी के प्रतिः—

"सुनहु लखन भल भरत सरीसा ।
विधि प्रपञ्च महँ सुना न दीसा ॥"

और भी कहा गया हैः—

"जो न होत जग जन्म भरत को ।
सकल धरम धुर धरणि धरत को ॥"

"होत न भूतल भाव भरत को।
सचर अचर चर अचर करत को॥"

श्रीमिथिलेशजी महाराज श्रीसुनयना अम्बा के प्रति चित्रकूट में कहते हैं:—

"सावधान सुनु सुमुखि सुलोचनि ।
भरत कथा भव बन्ध विमोचनि ॥
धर्म राज नय ब्रह्म बिचारू ।
यहां यथामति मोर प्रचारू ॥
सो मति मोर भरत महिमाहीं।
कहे काह छल छुवत न छाहीं ॥

दोहा—"निरवधि गुन निरुपम पुरुष, भरत भरत समजानि।
कहिय सुमेरु कि सेर सम, कवि कुल मति सकुचानि॥"

अगम सनेह भरत रघुवर को।
जहँ न जाय मन विधि हरि हर को॥
भरत महा महिमा सुनु रानी।
जानहिं राम न सकहिं बखानी॥
परमारथ स्वारथ सुख सारे ।
भरत न सपनेहु मनहुँ निहारे ॥
साधन सिद्धि राम पग नेहू ।
मोहि लखि परत मत येहू ॥"

[श्रीरामचरित मानस]

"यह जलनिधि खन्यौ मथ्यौ लंघ्यौ बांध्यौ अँचयो है।
तुलसीदास रघुबीर बन्धु महिमा को सिंधु तरि को कवि
पार गयो है॥"

[श्रीगीतावली, लंका काण्ड]

अर्थ—कविकुल तिलक प्रातः स्मरणीय श्रीमद्गोस्वामी जी महाराज कहते हैं कि इस समुद्र को श्रीसगर के पुत्रों ने तो खन लिया, देवताओं ने मथ लिया, श्रीहनुमन्तलालजी लाँघ गये, श्रीरघुनाथजी ने बाँध लिया और श्रीअगस्त्यजी पी गये, पर श्रीरघुवीर-बंधु श्रीभरतलालजी की महिमा के महा समुद्र को किन कबि की बुद्धि ने पार किया है? अर्थात् अगम्य है। इस प्रकार सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी से अभेद श्रीभरतलालजी की महिमा का कहाँ तक गान किया जा सकता है।

परिशिष्ट— भाग ।

अनन्त श्रीअग्र स्वामीजी महाराजः—

१—गावति चन्द्रकला सिय प्यारी, छवि छकि मतवारी ।
वीण बजावति मधुरे स्वर सों, मधुर ताल सुठिकारी ॥
सुनि जागे सिय-प्यारी-प्रीतम आलस भरे खुमारी ।
विनु दुकूल बैठे पलँगा पर, काहू सुधि न सम्हारी ॥
प्यारीलट छुटि सोह उरज पर जनु नागिन दुतिकारी ।
भरिअनुराग परस्पर दोऊ अधरामृत रसपियत खेलारी॥
दन्त नखों छत दोउ अंग झलकत मनु युग द्विरद
चैठि लड़ि भारी ॥ कबहुं प्रेम भरि लपटि झपटि दोउ
करि विपरीत क्रिया रसकारी ॥ प्रीतम प्यारी को कह
प्यारे प्यारी प्रीतम को कहि प्यारो ॥ चन्द्रकला रुख
पाय 'अग्र-अली' यह सुख झाँकति झांझरि द्वारी ।
यह सुख जाहि नयन नहिं निरख्यो जप तप योग
व्यर्थ करि हारी ॥

२—प्यारी ओर चन्द्रकला-चारुशीला प्यारे ओर अंगन सुगन्धमय सुउबटनो लगावती । दोउन के खुले गात अंगन छबि झलमलात मानो शशि कोटि सुधा किरण को लजावती ॥ निरखि २ सुभग गात आनन्द उर में न मात,

कोटिन रति-काम आलि दोउन पै वारती। कोमल कर में सुधार उबटनो लै बार-बार दोउन सखि हस्त 'अग्र' देती रस भावती ॥

३—चली सब युग छबि हिय में धरी।
सोय गये सखि पिय प्यारी अब आनन्द रस में भरी ॥
लाल लली गुण कहत परस्पर आनन्द सिन्धु परी ॥
निज २ कुञ्ज की ओर गई सखि यूथेश्वरि सबरी।
सबसे मिलि संग इन्दुकला थल 'अग्र' गई स्वथरी ॥

४—बजत बधाई रंग महल में प्रगटी चन्द्रकला सखि अगरी। परमेष्ठी सखि जनक-लली की, सकल कला गुण में अति नगरी॥ इनके चरण-कमल आश्रित विनु महल वास सुख की नहिं चहरी॥ उमा रमा ब्रह्माणि आदि सब दरशन हेतु खड़ो रह पवरी। जाके विभव शेष नहिं कहि सक कहे एक मुख 'अग्र' कस करी ॥

अनन्त श्री सूरकिशोरजी महाराजः—

१—जनकलली मधुरे स्वर गावैं ॥
नइ नइ तान सुनावैं सहचरि
चन्द्रकला अलि बीण बजावैं ॥
कोउ अलि मधुर मृदंग बजावैं
कोउ सखि रीझि २ गुन गावैं ॥

कोउ सखि रैन दिवस सुधि भूली
कोउ सखि मुखपर भौंर उड़ावैं ॥
राज किशोरि बिराजैं महल में
बिन सखियन कोउ जान न पावैं ॥
'सूर किशोर' वलैया लेहीं
कोउ सखि ब्याह की बात चलावैं ॥

अनन्त श्रीकृपानिवासजी महाराजः—

१—युगल रसिक रस जुवा खेलैं ॥

फरकति कृपा टहल सब सहचरि मणि गन मूठ परस्पर मेलैं। सतरंज पटली चौपर चौकस पुनि पुनि ललनादिक रंग रेलैं॥ चन्द्रकला विमला दोउ साहिद रौट जानि जेहि दिशि हंसि पेलैं॥ पासे करनि कलनि ललकारनि प्यारन की बतरावनि हेलैं। मुसकनि रसिकन की भरि चितवनि चलन कटाच्छन दोउ दिशि झेलैं॥ कृपा भण्डार अपार अमित वित दाउ सम्भारि सुनारि सकेलैं। ऊपर दाउ सदा प्यारी को प्रीतम अन्तर हित उमगेलैं॥ (श्री) "कृपा निवास" श्रीजानकि बल्लभ सुरति अमल वसि उठत अलेलैं॥

२—सियराम डोल वर झूलते।
गावत तान मान रस होरी बिच परमा कौतुक अतूलते॥

चन्द्रकला विमलादि झुलावैं निरखि हरषि बिन शूलते।
"कृपा निवास" अली मन भावन पीवत यह रस मूलते ॥

३—रंगमहल सियलालजू दोउ रंगभीने खेलैं रंगहोरी।
रंग भरी सखियन के यूथनि रंग सुरंगनि घोरी ॥
इत केशरि उत मृगमद सींचति श्याम गौरि पिय गोरी।
कर बाँधे फुल माल सों पकरे चन्द्रकला बरजोरी ॥
लाल लजाने लालची हा हा खाय दोउ कर जोरी।
नैन घुराये हरषि मुस्कानि सियाजू मुख मोरी ॥
खोले बन्धन रसिक छैल कीन्हें चूंदरि गहि बोरी।
लाज भरी पूछति हँसि नागरि कौन लई सु कहोरी ॥
बेगि दुराये आये खोजत पिय बोलत खोज करोरी।
रूपलता सखि जानि सु ल्याई गहि पकरे तब दौरी ॥
करि मनमानि हाँस परस्पर सो रस जान कहोरी।
जयति प्रसाद "निवास अली" छबि सब देखैं तृण तोरी ॥

४—सखी जन पूजि मनोरथ मन के कहत परस्पर माई।
यह साँझी सुख छकी सोहागिनि पूछत जन काई ॥
चन्द्रकला करि थार सौज धरि पूजा बिधि करवाई।
करि पूजा बर सुभग आरती साँझी साँझ लड़ाई ॥
मांगत बर दोउ ओर सहचरी यह जोरी सुख होरी।
पर की साँझी अधिक पुजावै जो पावै मन कोरी ॥

मंगन खरि चहुँ ओर सहेली अलबेली बनी ठनी।
गीत बाद्य नृत नागरि आगरि सागरि सुठि सुख घनी॥
करि गरबाँह युगल बनि सोहत साँझी निकट सुहाये।
जनु रबिमंडल रबि पूजन शशियुग मिलितन चढ़िआये
गौर श्याम छबि कबि को बरणै छाय रही सुषमारी।
जनु हेमलता तमाल चहुँदिशि फूलि रही फुलवारी॥
यह सुख सदा सनेह सगाई अबिचल चलत न राई।
जयति प्रसाद निवास निवाजी रही सु माधुरि पाई॥

अनन्त श्रीराम सखेजी महाराजः—

१—ए दोउ चन्द बसो उर मेरे।

दशरथ सुत अरु जनक नन्दिनी अरुण कमल कर कमलनि फेरे। बैठे सघन कुँज सरयू तट आस पास ललनागन घेरे॥
चन्द्रवती शिर चँवर ढुरावति चन्द्रकला तन हँसि हँसि हेरे।
ललित भुजा दिये अंश परस्पर झुकि रहे केश कपोलन नेरे॥
'राम सखे' छवि कहि न परत जब पान पीक मुख झुकि झुकि गेरे॥

२—नटत राम नागर नागरिया।

चन्द्रकला कल बीन बजावति गावति चन्द्रवती सहचरिया॥
रघुनन्दन तोरत मृदु तानन सियजू स्वरन भरत मनहरिया।

प्यारी अंश पिया भुज धारे पिय अंशन प्यारी भुजधरिया॥ मनहु तमाल लता कुँजन की साँवर गौरि परस्पर अरिया। सुधि आवत जब ब्याह समय की रास मंडल दोउ लेत भँवरिया। या सुख सिंधु रूप के ऊपर रति पति कोटि वारने करिया॥ बन प्रमोद बिहरत नाना बिधि अवध ललन अरु जनक दुलरिया। "रामसखे" दम्पति लीला रस लखि लखि दृगन प्रेम उर भरिया॥

३—मिलि जेंवत प्रीतम संग सिया दोउ मंगल मोद बढ़ावैं हो। कौर परस्पर देत चन्द्रमुख मंद मंद मुस्क्यावैं हो॥ भोजन बिविधि परोसति विमला कमला विजन डुलावैं हो। शोभा सिंधु कही न परै कछु माधुरि कुँज सुहावैं हो॥ चन्द्रकला सखि झारि लिए कर सरयू जल अँचवावैं हो। "रामसखे" प्रभु थार प्रसाद रह्यो अवशेष सो पावैं हो॥

४—अचवन करत लाल सिय प्यारी।
श्यामा पान लिए कर ठाढ़ी रामा लिए जल झारी।
चन्द्रवती खरिका दर्पण लिए चन्द्रकला सुकुमारी।
सुभगा लिये बागो प्रीतम को सहचरि लिए सिय सारी॥
करि अचवन बैठे सुख आसन सकल जनन सुखकारी।
"रामसखे" बलि बलि दम्पति छबि सुन्दर बदन निहारी॥

अनन्त श्रीरघुवरशरणजी महाराजः—

१—रघुनन्दन जनक दुलारी हो दोउ झूलत हैं पिय प्यारी। खम्भ बिशाल मनिनमय डारी पटुली छबि मन हारी। चन्द्रकला सखि मधुर झुलावहिं मोतियन माँग सँवारी॥ उमड़ि घुमड़ि सावन घन बरसत मंद फुही सुख-कारी। लहलह लहलह चल पुरवाई फहरत कँचुकि सारी॥ झुलहिं झुलावहिं मधुरे गावहिं सखियाँ दै दै तारी। 'रघुवर' छबि लखि सुर मुनि हरषित बार बार बलिहारी।

२—झूलैं श्रीजानकी राज कुमारी।
झुलवहिं चन्द्रकला सुभगा री॥ पहिरें कुसुम रंग तन सारी। विबिधि फूल फूले फुलवारी। बेलि चमेलि गुलाब नेवारी॥ केतकी मालती चम्प कल्हारी। जूही दौनादिक कचनारी॥ नाना बिटप लगे फल धारी। पनस रसाल अनार सुपारी॥ नसपाती सहतूत पिरारी। श्रीफल आदि गनै को झारी॥ अगणित खग तहँ हैं रवकारी। मोर चकोर कोकिला सारी॥ कीर महोक करत किलकारी। हंसादिक को बरनै पारी॥ चहुँदिशि मेघ घटा अति कारी। बरसत रिमझिम निर्मल बारी॥ दादुर झींगुर शब्द पियारी। "रघुवर" सिय छबि बनी मनहारी॥

अनन्त श्रीश्याम सखेजी महाराजः—

१—दो०—चित्रकूट चंपकलता, चामी कर तरु छाँह।
चन्द्रकला बिहरैं धरैं, 'श्यामसखे' गलबाँह॥

२—ठाकुर से मेरो ध्यान लगोरी।
ठाकुर दशरथ लाल हमारे,
ठकुराइन मिथिलेश किसोरी॥
बैठे कुँज धरे गलबहियाँ,
चन्द्रकला विमला चहुँ ओरी।
'श्याम सखे' दम्पति छबि निरखत,
पिय प्यारी की सुन्दर जोरी॥

अनन्त श्रीकरुणासिंधुजी (स्वामी श्रीराम-चरणदासजी) महाराजः—

१—देखो सखि अति अनन्द रास रच्यो रामचन्द्र रजनी छबि छिटकि रही शरद चाँदनी ॥ १ ॥ बहु सखि मण्डलाकार नृत्य गान स्वर संभार नृत्यत रघुनन्दन मिथिलेश नन्दिनी ॥ २ ॥ कंचन मणि लसत भूमि नृत्यत पद चपल घूमि, नूपुर छननन छमक छमक छन्दनी ॥ ३ ॥ कमला बिमलादि तान रागानु-गादि गान, करहिं राग रागिनी कला कलिन्दनी ॥४॥

चन्द्रकला बीणा मुचंग धुनि मृदंग मधुर, अपर सखि सीतार तार तर तरंगनी ॥ ५ ॥ ताधिग-धिग ताधिग-धिग ताधिन्ता ताधिन्ता, धिकिट धिकिट धिधिकट धिधिकट प्रबन्धनी ॥ ६ ॥ उघटत संगीत राग ताल मूर्छनादि ग्राम, हाव भाव पानि मुरनि नैन खंजनी ॥ ७ ॥ "श्रीरामचरण" युत समाज मेरे हियमें बिराज, यह बिहार नित अखंड रसिक मण्डनी ॥ ८ ॥

२—जागु जागु जागु श्याम जानकी विहारी ।
कुंद माल पीत माल कमल केतकी गुलाब विकसे प्रमोद बन विचित्र बन विहारी ॥ बोलहिं सारो मयूर कोकिला मराल कीर, गुंजहिं अलि रटहिं नाम श्री-जनक की दुलारी ॥......................
धात्री चारुस्मिता धरास्मृतादि धीरा सखी लिन्हें दंत-धावन प्रभु मन प्रसन्नकारी । उज्ञला प्रहंसी हंसी चन्द्रा चन्द्रकला विद्युलतादिक सखी मुख पोंछन पट धारी ॥............उचित विविध साज सज लीन्हें सखि कोटिन शिव-शेष आदि गावहिं यश जागु लाल-प्यारी । जागे करुणा निधान निज निज कृत सखि सुजान 'राम-चरण' दम्पति पर तन मन सखि वारी ॥

अनन्त श्रीज्ञानाअलीजी महाराजः—

(सियवर केलि पदावली से)

१—सोय जगी सिय सहचरि प्यारी।
उत्थापन सुख समय जानि मन सेवा सजग सबै सुकुमारी॥ मुख प्रक्षालि अंग-राग मनोहर सजि सजि भूषण वसन सँवारी। चन्द्रकला विमला कमला अलि चारुशीलादिक सौज तैयारी॥ कनक-थार पकवान विविधि धरि मोदक सेव सलोनो न्यारी। सुमन माल कोउ पान अतर वर कोउ सुरभित सरयू शुचि वारी॥ गाय गाय गुण-रूप माधुरी राग श्री-स्वर सरस सुधारी। ग्राम तीन मूर्छना सात स्वर 'ज्ञानाअलि' सितार लयकारी॥

(पद सं० ३६१)

२—शरद निशि चाँदनी छबि छाई।
रहस रच्यो श्रीजनक नन्दिनी रघुनन्दन रुख पाई॥ चन्द्रवती चन्द्रकला सुभगा चन्द्राननि अरु चारु-शीलादिक सहचरि जुरि आई। नवल रस दंपति सुख-दाई। गान कला कल कोकिल वयनी रहसि गाई॥ सुनैना-लली भली भाई। ज्ञानाअलि नृपललन नवल सँग नित सुख सरसाई॥ (पद सं० १६२)

अनन्त श्रीरसमालाजी महाराजः—

चन्द्रकला तिय नागरि बचन कहे सियहिं जनाय। देखु सिय पिय छबि मन लाय। विहरत कुंज गलिन रघु-राय ॥ शशी वरन सब तिय समुदाय । श्यामल तन घन रही समाय ॥ राजकुमर तिय मैन जगाय। रमत सबन सन रूप लुभाय ॥ कोइ तिय पिय को निज उर लाय। सुमन माल तेहि निज पहिराय ॥ करि बीरी निज करन खवाय। अधर सुधारस पियत अघाय ॥ कोइ सखि बीन मृदङ्ग बजाय। गावत नाचत पियहिं रिझाय ॥ लेत तान स्वर ताल मिलाय। 'रसमाला' सखि वलि २ जाय ॥

अनन्त श्रीनवलअलीजी महाराजः—

१—पिया पास कोउ पहुँचावो री।
पंच-बान अंग-अंग बेधति हिय,
कोउ श्याम चुम्बक लै आवो री।
जहर भरे सर तन मन दाहत,
कोउ माँह बदन सों जिआवोरी ॥
अबहिं चलत नरी फेरि न मिलत सरी,
पछिताय रहो कछु हाथ न आवोरी।
'नवल-विहारी' प्रिया चन्द्रकलाजू,
प्रिया-प्रीतम सों मिलावो री ॥

अनन्त श्रीमधुरअलीजी महाराजः—

१—सजि सिय पिय झूलन आये।

श्याम गौर मन हरन सुभग अति, सरस सनेह सुहाये।

चन्द्रकला सुभगादि अलीगन, संग समाज बनाये।

'मधुरअली' बिलसत प्रमोदवन, लखि रति मदन लजाये॥

(पद संख्या ११)

२—दोउ क्या झूलत झमकि झुलनवा।

सुन्दर मास सवनवा।

करि शृँगार सुभग अँग भूषण,

सिय प्यारी अवध ललनवा॥

चन्द्रकला सुभगादि अलीगन,

आनँद भरी उमगवा।

गाय मलार लिए पंचम स्वर,

लै लै तान कतलवा॥

बोलत मोर मेघ जल बरषत,

बहत सो मंद पवनवा।

'मधुर अली' दम्पति सुखमानिधि,

ऐसे मन के हरनवा॥

(पद संख्या १०४)

अनन्त श्रीरसिक-अलीजी महाराजः—

(वर्षोत्सव से)

१—होरी खेलन लाईं सखियाँ सुघर सिखाय।
वारी जनक-दुलारी लड़ैती सुखमा वरनि न जाय॥
फाग-चौक बिच ठाढ़े पिया सजि केशर रङ्ग बनाय।
बाल-सखा विदुषक विट चेटक ते बहु भीर सोहाय॥
चन्द्रकला कर दई पिचकारी रङ्ग भरी सुख छाय।
प्रीतम दिशि चलाई प्यारी जब पिय रहे मुसुकाय॥
चतुर चूड़ामणि लै कर पिचका सखियां दई भिजाय।
धूम मची दुहुँ ओर छमाछम नूपुर धुनि दिशि छाय॥
बाजत चङ्ग मृदङ्ग झाँझ डफ कलरव गान सोहाय।
'रसिक-अली' यह युगल केलि पर निरखि न नैन अघाय॥

(पद सं० ६८)

२—होरी खेलत राज--दुलारी।
अपने पिया पर उमगि २ उर मारत रङ्गभरी पिच-कारी॥ चन्द्रकला विमलादि अग्र सखि इत उत सैन सजी है अपारी। कङ्कण-किङ्किणि नू पुर को रव पूरि रह्यो पुर में दिशि चारी॥ बाजत चङ्ग उमङ्ग बढ़ावत गावत गीत रसीली गारी। उमड़ि अबीर गुलाल छयो नभ वहि चली रंग तरङ्गिनि भारी॥ दुहुँ दिशि फूलन

गेंद कुमकुमा फेंकत दौरि प्रचारि प्रचारी। 'रसिक-अली' उत जै रघुवर पिय इत जै जनक-कुमारी ॥७२॥

३—परस्पर पिय-प्यारी करत शृँगार।
चन्द्रकला अरु चन्द्रमुखी दोउ देत सुधारि सुधार॥ क्रीट—चन्द्रिका ललित मणिनमय सिर धरि करनि सुधार। जनु घन दामिनि ऊपर राजत रवि-शशि ज्योति अपार॥ कुण्डल कर्णफूल बुलाक नथ और विविध मनिहार। कटि किङ्किणि केयूर जटित नग नूपुर अति रवकार॥ पीत नील अति रुचिर वसन तन पहिरैं घूम-घुमार। नटनि वेष यह सिय रघुवर को निरखि 'रसिक' वलिहार॥ १३४॥

४—नटत नवल दोउ रङ्ग भरे।
जनक-लली रघुलाल सलोने अरस परस भुज अंश धरे॥ छम छम छम छम छननन नननन उघटत गति संग स्वरन भरे। बाजत वीणा मृदङ्ग बाँसुरी चन्द्रकला कल गान करे॥ नवल तियन मण्डल विच प्यारो मृदु हँसि उरनि अनङ्ग वरे। 'रसिक-अली' कटि मटकि पटकि पग झटकि लेत मुनि मन सुघरे॥ १५०॥

अनन्त श्रीयुगल-प्रियाजी महाराजः—

(श्रीयुगल प्रिया–पदावली से)

१—अब मोहि चन्द्रकलाजू की आशा ।

जनकललीजू की मुख्य सहेली,
विहरति सकल विलासा ॥
चौरासी भव फन्द छुड़ाके,
रसिकन संग दियो बासा ।
श्रीयुगलप्रिया अब नहिं कछु संशय,
विपिन प्रमोद निवासा ॥

२—जय श्रीचन्द्रकला अलबेली ।

अति सुकुमारि रूप गुण आगरि नागरि गर्व गहेली ॥
निमिकुल प्रगटि संग सिय प्यारी प्रियकारी रसकेली ।
चन्द्रप्रभाजू की सुकृत कल्पतरु उलही लता नवेली ॥
काञ्चन बन कमला प्रमोद बन लीला लहरि रिझेली ।
मोहनि यन्त्र वीणा स्वर टेरति प्रीतम चित्त विथैली ॥
शरणागत पालिनि रसमालिनि चालिनि गज गति हेली । 'श्रीयुगल-प्रिया' अनुराग सदा सम्बन्ध राग को मेली ॥

३—भोरे श्रीचन्द्रकला अलबेली वीन बजाई प्यारी ।
विमलादिक निज कुंज-कुंज ते आनि जुरी इक सारी ॥

कनक निकुञ्ज भवन पलका पर पौढ़े युगल विहारी। उठि अलसात जम्हाँत रंग भरि अँखिया सुरति खुमारी॥ विपुल थार सेवा सौंजनि कर कंजनि मंजु सुधारी। अग्र भाग श्रीअग्र सहचरी युगल-प्रिया वलिहारी॥

४—आजु सुकुमारी चली है सुधारी।
निज अँग२ में भूषन वसन सँवारी रति कोटिन वारी॥ थारें कर कंज धारी चन्द्रकलाजू की वारी। आई हैं विपुल निज लखि अधिकारी॥ चली गान करत हरत मन लखि छबि कनक-भवन सैन कुञ्ज ढिग चारी। उठे दोउ लाल भाल भाग जाग सबहिं के अबहिं के युगल प्रिया के भाग भारी॥

५—राजत श्यामा श्याम सुजान।
सरयू तीर निकुँज भवन में राम-सिया रस खान॥
आलस भरे उनीन्दे लोचन निरखत अति सुखदान।
रुचि सों भैरो राग अलापत लै २ सुन्दर तान॥
चन्द्रकला सखि अलक सँवारहिं लखें मंद मुसकान।
रसिक जनन के जीवन दोऊ युगलप्रिया के प्रान॥

६—पलंग ते उतरि दोउ चौकी रतन जटित तापै बैठि लाल प्यारी दंतधावन करत। कंचन रतन झारि युग

अलि कर कंज धारि सरजु वारि देत मुख छवि दृग भरत ॥ दीरघ आदर्श देखि चन्द्रकला तन सुपेखि दीर्घ नैन के कटाक्ष आलसता हरत । युगल-प्रिया कोमल पट मुख दृग कर कंज पोछि चरन परसि रसिक जननि जीवन धन धरत ॥

७—झूलत चन्द्रप्रभाजू की लाली ।

परमाचार्य आदि रसिकन की वीणा बजावति दै कर ताली । मंद २ मुसुकात झुलन बिच करत नये २ हाली ॥ मधुर २ सखी हरषि झुलावहिं मधुर वयस-वाली । श्रीयुगल-प्रिया की सर्वस सम्पति फरत मनोरथ वाली ॥

८—हिंडोरे झूलत राजदुलारी ॥

चन्द्रप्रभा की लाड़ लड़ैती सिय-पिय प्रानन प्यारी ।
सर्वेश्वरी परम आचारज जन रुचि राखन हारी ॥
शोभा-शील रूप की आगरि सहचरि गुन सुखकारी ।
कबहुँक वीन बजावति गावति ताल देत करतारी ॥
कबहुँक जनक लली संग झूलत झुलवत अवधबिहारी ।
'सियाअली' रस रहस स्वामिनी डारत तन-मन वारी ॥

(श्रीसिया-अलीजी)

स्वामी श्रीयुगलानन्यशरणजी महाराजः—

१—श्रीचन्द्रकला सुखखानी।
प्रगटी प्रेमा परम पावनी मूरति छवि गुन खानी।
माधव मास मंजु मंगलमय मोद प्रमोद सुछानी॥
रसिकवर्य्य रसराज आर्य पर रहसाचार्य प्रधानी।
योग युक्ति जुगवति जन जिय की जीवन 'युग्म' सुजानी॥

२—चन्द्रकला सब विधि सुखकारी।
श्रीसम्पन्न सीम सौन्दर्या सकल भाँति सौभाग्य सँवारी॥ परमाचार्य पूज्यता त्रिभुवन अग्रगण्य अलियन सरदारी। सिय तद्रूप सरूप सलोनी छबि गुनखानि अनूप उदारी॥ रहसज्ञा रसदा रस सागरि रमवति रसिया राम विहारी। चन्द्रभानु कुल कुमुद प्रफुल्लित चन्दप्रभा भव २ उजियारी॥ विगत कलंक मयंक दिव्य द्युति उर उमगात निशंक निहारी।
युगन २ जिवो जनकदुलारी 'युग्म' सजीवन प्राण पियारी॥

३—श्रीजानकी लघु भगिनि सुन्दर सर्वशक्ति शिरोमणी।
रूप छबि लावण्य सुखमा अग्रगण्या गुन गनी॥
परतम परेश रसेश परब्रह्म सुख संदोहनी।
कलकेलि रस सम्पन्न सियराम मन की मोहनी॥

माघव सुचौदस पावनी सित पक्ष प्रिय मन भावनी।
चन्द्रकलाभिराम नामा भक्ति रसमय दायिनी॥
सदके गई दिलरुबा पर मुख माँह वाली अली।
अह्लाद जीवन 'युग्म' की जिय मानिन्द कुमुदिनि कली॥

४—जय श्रीचन्द्रकला सुकुमारी।
श्रीमिथिलापति प्राण पियारी। साहबजादी शहन्शाह को चन्द्रभानु सुखकारी॥ चन्द्रप्रभा की कोख जुड़ावन शशि सम प्रभा पसारी। पुर परिवार प्रजागण कुमुदिनि हृदय फुलावन हारी॥ रहस अगार शृङ्गार कोष की कुञ्जी खोलन वारी। मधुर केलि दम्पति छवि सम्पति 'हेमलता' अधिकारी॥

५—जय श्रीचन्द्रकला गुण पावन।
अमल अलौकिक अति आश्चर्यित अकथ अनूप सुहावन॥ विगत कलंक मयंक दिव्य द्युति सखिन मध्य दरसावन। नृत्य गीत गति वाद्य उघटि रस श्री-सियराम रमावन॥ छैल-छबीली छरस छकावन छनहीं छन छवि छावन। रसाचार्य्य रस प्रीति 'युग्म' प्रद निज पर रूप जनावन॥

६—झूलो २ हिंडोले आज रसिक रघुराज लला॥
सरस समीर सुगंध बहत वर विहरत काम कला।

सघन गगन घन दाम दमक दुति दशौंदिशि रुदै दला॥
भाव भरी सहचरी चाह चित चमकति चन्द्रकला
'युगलअनन्यअली' आलस को अवसर कौन भला ॥

स्वामी श्रीजानकीवरशरणजी महाराजः—

१—जय श्रीचन्द्रकला ठकुरानी ॥

परमैश्वर्या वैधी विज्ञा रागानुगा प्रधानी। सिय अनुजा प्रिय अग्र गामिनी स्वामिनि रुख पहिचानी ॥ मधुर केलि मुग्धन मन मोदक मधुरी छबि अरुझानी । सुर-पादप प्रिय पाय प्रमोदक "प्रीतिलता" लपटानी ॥

२—चन्द्रकला गुण ज्ञान निराली ।

जनकलली की अली शिरोमणि प्रीति सुरीति सदा प्रतिपाली॥ मुक्ता छबि रस रूप माधुरी चुनति सुचतुरी चारु मराली। सोइ अह्लादिनि रूप प्रगटानी चन्द्रभानु घर वर खुशहाली ॥ रसिक प्रफुल्लित प्रेम ठोस लहि दोष कोष संचित घनघाली। जानकिवर अनुराग भाग की 'प्रीतिलता' बिकसी वर लाली ॥

३—जनक सुता की परम पियारी ।

चन्द्रभानु शुचि सुकृत महोदधि प्रगटी चन्द्रकला

सुकुमारी । शिशुपन ते निज हित पहिचानी खेलत संग खात एक थारी ॥ पल वियोग सहि सकत न सिय को इत उत ताकति पलक पसारी । चंद चाँदनी चतुर चकोरी चौगुन चाह चित्त अति भारी ॥ क्रीड़ा कलित कुतूहल करती नित नव जनक-जननि सुखकारी । 'प्रीतिलता' स्वामिनि सबही की सेवत रीझत राम विहारी ॥

४—चन्द्रकला कल किरण पसारी ॥

चन्द्रकला इत रामचन्द्र उत दूनों पच्छ दून उजियारी । मिथिला अवध एक रस संतत सुख उमड़ात उदधि अति भारी ॥ युगल ज्योति जागति जग जाहिर जिय जीवन की जरनि बिदारी । सुधा सींच सानन्द श्रवत शुचि "सीताकान्त" शांत चित धारी ॥

(स्वामी श्रीसीताकान्तशरणजी महाराज)

स्वामी श्रीरामवल्लभाशरणजी महाराजः—

(श्रीयुगल विहार पदावली से)

१—श्रीचन्द्रप्रभा की मनोरथ वेली । सबहीं विधि सुख-खानी ॥ जेहि फल रूप प्रगट भई प्यारी सब सुख सुकृत सकेली ॥ श्रीगौतम मुनि नाम करन कहि चन्द्रकला छबि अलि अलबेली । अमित सखी श्रीसिय

स्वामिनि की तिन में सब बिधि मुख्य सहेली ॥ इनकी कृपा होइहहिं जिन पर सिय पिय ताहि हथेली । युगलविहारिणि युगल विहारी मिलि निसि वासर होइहहिं केली ॥

२—जय श्रीचन्द्रकला सुखदाई ॥

सिय सिय पिय मुख चन्द्रकला की कला अनूप रूप जनु जाई ॥ चंद्रभानु श्रीचंद्रप्रभा की भाग राग कछु कहि नहिं जाई । मन भावन मन भावनि सिय पिय निगम नेति रस निज घर पाई ॥ गावत यश मन भावत अँगहि अँग उमंग बढ़ाई । लली लाल खुश-हाल ख्याल कल कुशला दृग दरसाई ॥ आर्य्य वर्य्य आचार्य सुखद प्रभु श्रीप्रीतिलता दृढ़ गहि शरनाई । मुग्ध भाव प्रद 'युगलविहारिनि' सबहीं विधि लीजै अपनाई ॥

३—श्रीचन्द्रप्रभाजू की सुकृत सुबेली ।

चन्द्रकला कली फली अलबेली ॥

जनकलली श्रीअवध ललाजू की इनको कृपा रहस जग फैली । अमित अली रस पली भली विधि अष्ट-याम सेवा सुख देली । भाव भरत भाविक मानस सर 'युगल विहारिनि' युगल सुकेली ॥

४—आजु जनम श्रीचन्द्रकला को।

परमाचार्य्य सकल यूथेश्वरि,
प्रिया प्रीतम बिहार कुशला को॥
श्रीस्वामिनि सिय छठी दिवस रवि,
मंगल निधि उमड़्यो मिथिला को।
मायिक गुन तरु कूल मूल ढहि,
कलि कृत कर सब विधि सिथिला को॥
मोद विनोद दसौंदिसि माच्यो,
छबि नाच्यो मन कमला को॥
मल विक्षेप आदि दुख मेट्यो,
गावत गीत प्रीति अचला को॥
मातु सुनयना श्रीविदेह की,
भाग सरा है कौन भला को।
युगल विहार अपार विहारिनि,
चन्द्रकला लली अवध लला को॥

परमहंस श्रीसियालालशरणजी महाराजः—

* श्रीप्रेमलताजी *

(षटऋतु विमल विहार दर्पण से)

"यहि विधि गई याम युग रजनी सजनी खबर जनाई है।
अवसर जानि सुनींद सहचरी आंखिन में धसि आई है॥
सुनि विनती रघुलाल लखी सिय जानी जिय अलसाई है।
'प्रेमलता' कहि करिय विसर्जन रासरङ्ग सुखदाई है ॥ ११९ ॥
सुनि श्रीचन्द्रकला गुण आगरि बीन विसर्जन बजवाई।
जानी सकल समाज त्यागि नृत गान तान स्वर समुदाई॥
खोलि रास पोशाक अपर अलि पहिरि २ प्रभु पहँ आई।
'प्रेमलता' सिरनाइ जुहारि सुखड़ी जोरि कर सचुपाई ॥१२०॥"

'सबकी रुचिशुचि बूझि दयानिधि सिय रुख लखि पिय मुसुकाये।
चन्द्रकला तन हेरि हरषि अलि होरिहिं निकट सुबुलवाये॥
करधरि शीश कही कमला तट सजहु साज सुनि सुखपाये।
'प्रेमलता' अलि अमित संग लै चली चतुरिपद सिरनाये ॥१८४"

(छप्पय १८४)

पिया तुम हो सुघर याकि मैं हूं सुघर?
होड़ पड़ी दोऊ दिशि अटपट,
इतै जनकलली उतै रघुवर॥
करत शृङ्गार परस्पर दोऊ

आपुस में पड़ि गई है झगड़ ।।

श्रीचन्द्रकला दर्पण धै सन्मुख,

कहेउ लेहु निपटाय झगड़ ।।

प्रेमलता प्यारी छवि लखिकै,

निज छबि लखि किय नीची नजर ।।

स्वामी श्रीरामकिशोरशरणजी महाराजः—

(श्रीरसमोदलताजी)

❋ आचार्य वन्दना ❋

सोरठा—

वन्दौं गुरु परमेश, जिनकी महिमा को कहै।
थके गणेश महेश, शारद शेष रमेश श्रुत ।। १ ।।

दोहा—

जिनके पद नख प्रभा से, हृदय सु होत प्रकाश।
नशत तिमिर सूझत हिये, सिय-पिय विपिन विलास ।। २ ।।
वन्दौं श्रीचन्द्रकला अली, सकल सखिन सिरमौर।
कृपा दृष्टि करिये हिये, सूझै रहस हलोर ।। ३ ।।
वन्दौं श्रीचारुशिलादि अली, रूप गुणन की खान।
करुणाकरि हिय में बसो, उपजावहु रस ज्ञान ।। ४ ।।
वन्दौं श्रीमन्मारुति, जिन सम रसिकन आन।
दया दृष्टि मो पै करो, दरसावहु रस ज्ञान ।। ५ ।।

वन्दौं श्रीमद्जगद्गुरु, श्रीरामानन्द महान ।
रसिकन पंकज के लिये, उदित भानु भगवान ॥ ६ ॥
श्री श्रीतुलसीदासजी, भाविक महा उदार ।
कलि कुटिल जीव निस्तार हित, श्रीवाल्मीकि अवतार॥७
यहौ कहत सकुचत हिय, हैं सिय पिय अवतार ।
जगद्गुरु विख्यात हैं, जिन 'मानस' रचि सार ॥ ८ ॥
तिनके पद अरविन्द को, वन्दौं बारम्बार ।
कृपा करौ दरसै हिये, सिय पिय रहस उदार ॥ ९ ॥
श्रीमद् अग्राचार्य वर, सब रसिकन सिरताज ।
रसिक सालि हित मेघ ह्वै, बरसायो रसराज ॥ १० ॥
वन्दौं तिनके चरण रज, मम धन जीवन प्राण ।
निज लघु किंकर जानिकै, दरसावहु रस ज्ञान ॥ ११ ॥
श्रीनाभा श्रीबालअली, श्रीमधुराचार्य धुरीन ।
श्रीरामसखे हरि रूपसखी, श्रीकृपानिवास प्रवीन ॥१२॥
श्रीरामचरण हरि रसिकअली, श्रीयुगलप्रिया रसखान ।
श्रीयुगलानन्य प्रपन्नजू, और जो रसिक महान ॥ १३ ॥
वन्दौं सबके पद कमल, सदा जोरि युग पानि ।
सब मिलिके करिये कृपा, लघुतर किंकर जानि ॥१४॥
रहस चाव दिन दिन बढ़ै, हरहु अरस अज्ञान ।
मम अभिलाष पुरावहु, सब मिलि कृपा निधान ॥१५॥

बन्दौं जानकी जान पद, सखिन सहित रसरास।
नृत्यकला दरसाइके, पुरवहु सब विधि आश ॥ १६ ॥
जय जय जय मम स्वामिनी, जय पिय अवध किशोर।
जय जय नटवर वेषजू, जय रसिकन सिरमौर ॥ १७ ॥
राम रूप सम रूप नहीं, राम धाम सम धाम।
राम चरित सम चरित नहीं, रामनाम सम नाम ॥१८॥
वन प्रमोद सम वन नहीं, सरि नहिं सरयू समान ।
राम-रास सम रास नहीं,मुनि कोकिल कियो गान ॥१९॥
'रमु' क्रीड़ा के अर्थ से, रामहिं रास प्रधान।
औरन में यह गौण है, रस कवि करत बखान ॥ २० ॥
जो ईशन के ईश हैं, अवतारन अवतारि।
कारण के कारण अहैं, बरणत वेद प्रचारि ॥ २१ ॥
सोई सीताराम हैं, अवध धाम के माँह।
विहरत सखी अनंत युत, सिय संग दिये गलबाँह ॥२२॥
क्वचित रास लीला करत, क्वचित करत जल केलि।
क्वचित सिया संग झूलहीं, क्वचित फाग रसझेलि ॥२३॥
एवं नित्य विहार में, प्रिया प्रेम रस लीन ।
अवध छाँड़ि गवनत नहीं, पद भरि रसिक प्रवीन ॥२४॥

मंगल—

मंगल श्रीप्रमोदवन, मंगल लली औ लाल।
मंगल सखिन समाज हैं, मंगल रसिकन माल ॥ २५ ॥

सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकला स्तवः—

❋ सवैया ❋

वारिज दीप्त हरी पद पद्म सु मार्दव और ललाई से प्यारी।
चहुँधाक्षिति लाल ह्वै जाय जबै तुव मन्द गती प्रचरन्तिदुलारी
वर्तु लकार उरु युग से तुव रम्भ स्तम्भ के मान विदारी।
वेगि द्रवो मम देखि दशा तुव चन्द्रकले सिय की अति प्यारी॥

२-किंकिणि और विभूषण भूषित छीन कटी अवलोकि तिहारी।
जाइ लियो वनवास गई जो रही अभिमान गजारि को भारी॥
सुभरी सौंदर्य नितम्ब प्रकाशसे चन्द्र की शोभा भगीदिशिचारी।
कटिमें परिनद्ध सोहावन वस्त्र सुशोभि रही जरितारि किनारी॥

३-पीपर पत्र समान महा मधुरोदर आपके हैं सुकुमारी।
रोम सँवार से शोभि रही त्रिवली अरु नाभि महाछवि धारी॥
जनु गंग के वीचमें भौंर हिलोर सी राजि रही प्रमदा छविहारी
मेरी विनय सुनि वेगि द्रवो अव आइके ताप हरो श्रम भारी॥

४--कुच उन्नत और कठोर महाअतिदीर्घ दोऊ पियके श्रमकारी।
ध्यान से निष्ठ दो शंकर के युत कंचन के नग हैं युग क्यारी॥
श्रीफल हैं किधौं हैं घट हेम भरे रस प्रीतम के हिय हारी।
किधौं युग कामके कन्दुक हैं पिय के करसे अति लालित भारी॥

५--किधौंयुग कामके दुन्दुभिहैं निजकान्त विजयके जनावनहारी
कंचुकि चित्र विचित्र के भीतर कि युग वाज के पाले हैं प्यारी॥

प्रीतम के मन तित्तिर को झट जाइके वेगि चपेटन हारी।
हाय हरो अह्लाद भरो तुव जानि सिया जू की दासी हमारी॥

६–भूषण भूषित ग्रीव प्रकाश कपोत के ग्रीव की कान्ति हरेरी।
कंकण चूरी से अङ्गद के युत वाहु से हारि मृणाल भगेरी॥
ठोरी के वीच विराजत विन्दु मनो रसराज के छौना लसेरी।
हे श्रीचन्द्रकले सर्वेश्वरि आय हरो मेरा दुःख सवेरी॥

७--अधराधर के विच दन्तकी पंक्ति विराजत इषत हासयुताहै।
प्रात के सूर्य्य वो हीरा समूह औ विम्ब प्रकाश पगे वहुधा है॥
शुक तुण्ड की सुन्दरता हर के सुप्रकाशित घ्राण सुगन्ध भराहै
तव नयनकी शोभा निहारिके खंजनमीन औ कंज सुवारिवसाहै

८–भौंह सलोने आपके सुन्दर काम के चाप के दाप हरी है।
भाल विशाल में सिन्दुर विन्दु सों लालित कान्ति प्रकाशरहीहै
गोल कपोल महादुतिवन्त सुचन्द्र छटा छवि छीन लई है।
नागिन सी अलकें दुहुँ ओर सुपीवत अमृत घेरि रही है॥

६–कोटिन सूर्य्य प्रभा को दवाके सुकर्ण विभूषण छाजि रहाहै।
मुख मंडल ऊपर चन्द्र करोरनि वारिये जू श्रीभानुसुता है॥
नग से जु जड़े सिर ऊपर चन्द्रिका सर्व प्रकाश को छीन बसाहै
पृष्ठोपरि पुष्पकली सी गुही सु विराजति वेणी सुगन्ध सना है॥

१०--नागिन ने मानो स्वर्णलतोपरि झूलि रही छवि फैलिरहाहै
रसरंग की भूमि में प्राणपती के प्रताड़न को मानो काम कशाहै
श्याम सुसारी घटा अतिकारी सुविज्जु के ऊपर थान किया है।
ऐसी सुविग्रह चन्द्रकले! भगिनी निज जानि देखैहो कदा है॥

११--कबहूँ सरयू तट कुँज निकुँजके मध्य सखीगणसे परिवारित
वीणा मृदंग औ गान के शब्द से गूँज रही सब कुँज प्रकाशित॥
प्यारी औ प्रीतम मध्य लसैं तुव नृत्यके भाव अनेक दरसावित
रीझ के हार गले से उतारि पिया तोहि ग्रीव में लय पहिरावित

१२-प्रीतम के संग कन्दुक खेलमें चंचलता अतिशय विस्तारी।
मन की अरु मारुत की गति को तुव जीत लई चन्द्रभानुदुलारी
अलकें मुख ऊपर आवतु हैं तव वारति हैं एक हाथ से प्यारी।
एक हाथ से गेन्द अकाश उछारें पिया ठकजक्क उरोज निहारी॥

१३-होय विशेष विमुग्ध पिया तव दासके नाईं जो लोकनभर्ता
होय पराजित तोहि प्रसंशत हैं प्रिय राउरि जीति सुयुक्ता॥
लई जो लगाइ पिया उर में मुख ऊपर हैं श्रम विन्दु प्रशिक्ता।
ऐसी सुविग्रह चन्द्रकले तु देखैहौ कदा मोहि जानि अशक्ता॥

१४-कबहूं गलधाइ लगे पिय जाइ उरोज लगाइ मिलीसियप्यारी
सुमनोज के ताप हरी अति शीघ्र पियाके सुशीतलता विस्तारी॥
अस दम्पति के सुख सेज विहार दया करिके तू दिखावन वारी
तुव ह्वै सुप्रसन्न सुनो विनती मम हे श्रीचन्द्रकले! सुखकारी॥

१५--तुव नृत्यके वीचमेंहंससी गच्छसि रंगभूमीमें गयन्दकीनाईं
सखि मंडल यूथ सहस्रन में सखि राजति हौ अति सिंहकी नाईं
शची अरु शारद लच्छि रती हिमवन्त सुता मिलिकै सब आईं।
रूप त्वया अतिशय अवलोकिके गर्व गुमान सबै बिसराईं॥

१६--वोणा प्रवादमें प्रीतमके संग सखि शर्त लगाइके जीतनहारी
यंत्र बजाइके प्रीतम प्यारी रिझाइ के तू अपने वशकारी॥

त्रैलोक्य के बीणा प्रवादन को तुव जीत लई भये शिष्य तिहारी
होहु प्रसन्न दया करिके हमरी सुधि लेहु सिया सखि प्यारी ॥

१७–देखि के कोक कलान त्वया पिय बारहिं वार प्रशंशत हैं जू
जो कोकविधानमें देखि न आजलौं सो तू प्रत्यक्ष दिखाय हमें जू
हम जानत हैं तव अँग से उद्भव कोक कलान अहैं सिगरे जू।
ए समग्र रहस्य प्रदान करो हम आपके हैं अस बोले पिया जू ॥

१८–सुकृपा बल आपके साधनके विन होत महारसके अधिकारी
विन यत्न प्रयास सुदम्पति के संग जीव अनेकन सौख्य सुधारी
यावत यूथन की हैं यूथेश्वरि आयसु आपकी कारयकारी।
हे सर्वेश्वरि चन्द्रकले! भव बूड़त ते मोहि लेहु उबारी ॥

१९–प्राकृत भाव से वर्जित दिव्य महारस उत्तम के अधिकारी।
कोटिन साधन से नहिं प्रापति होत विना करुणा के तिहारी ॥
जिनकी करुणा के विना ध्रुव नाहीं सुहोत प्रसन्न पियासियप्यारी
तिनको करुणा के सुचाहत हौं हमहूँ श्रीचन्द्रकले सिय प्यारी ॥

२०–हे श्रीचन्द्रकले! सियजूको तू मान दिवावनि प्राणपियासे।
अपनी चतुराई से मान छुड़ाके पियाको मिलावति प्राणप्रियासे
दोऊ के काम जगावति हौ तुम व्यंगभरी करिके बतियाँ से।
हाय कदा तुव आनि दिखाओगी आपन रूप सु विज्जु छटासे॥

२१–पाप प्रपंच भरे छल छिद्र से जन्म अनेकन संचितकारी।
कोटि करे जो उपाय तऊ नहिं जाइ सके पिय पास लौं प्यारी ॥
ऐसेहु होय जो आपके आश्रित दौरि मिले सिय लै अँकवारी।
आपके आश्रित जानि सियाजू ने वत्सलता अतिशय विस्तारी॥

२२--सो को जो परत्व सुअद्भुत आपकी जानतिहैं श्रीराजदुलारी
ब्रह्मादिक देवन से अति गोपित वैभव आपकी है अति भारी ॥
योगिन के गम नाहिं जहां रघुवंशकुमारहुँ के भ्रमकारी।
ऐसिहु स्वामिनि पाइके मैं जग के अति कष्ट सहौं बिस्तारी ॥
२३--ब्रह्माणि रमा अरु पारवती जिनकी रुख पाइके कारजकारी
जाकी लीलाके भीतरविष्णु विधीश सबै वशीभूतहै भौंहनिहारी
अपनी तू ऐश्वर्य के आपहिं जानहु और कोई नहिं जाननहारी।
सौलभ्यको धारिदया करिके मोहिआनि मिलो हम दासीतिहारी
२४--दम्पति के सुअनंत सखी तामें यूथ अनंत अनन्त यूथेश्वरी।
रूप भरी चतुराई भरी गुण ज्ञान भरी एक एक सवैरी ॥
तामें रूप गुणाधिकता करिके तोहि दम्पति ने अभिषेक करेरी।
तोहि दई सर्वेश्वरी के पद श्रीमिथिलेशललीजू की प्यारी ॥
२५--चित्र विचित्र लगे मणि खम्भ हजारन हैं चहुंधा तेहि मांही
दरवाजन में परदे वहुते जड़िदार अनेकन रंगन कांही ॥
मोतिन झालर युक्त चहुँदिशि चाँदनी ऊपर में झलकांही।
तेहि मध्य की भूमि सुचित्रित हैं तेहि ऊपर रेशमि फर्ससुहाहीं ॥
२६--यूथ अनेकन से परिवारित यूथेश्वरी सब भी चहुँधा हैं।
तेहि मध्य सिंहासन रत्न जड़े जामें भानु अनेकन के परभाहैं ॥
तेहि ऊपर आप विराजति हो वहु दामिनीकी छविछाइ रहाहै।
दुहुँ ओरसे युग्म सखी कर चंवर चलावतिहैं तेहिको सम ना है
२७--काचित छत्र लिये कर में सिर ऊपर आपके चाल रही है।
नृत्यन गानन बाजनके धुनिसे सुसभा अति सोह रही है ॥

अपनी गुण चातुरता करिके सबको तुव ने परितोष रही है।
यहि भांति विचित्र सभा कुँजमें नित होत सभा आश्चर्यमयीहै॥
२८-होत प्रभात सभा नितहीं अस आनन्द को परमान विनाहै
जिनके बड़भाग सुहाग अती सो प्रभात समै निरखैं हरषा है॥
अस सौज समेत सभा कुंजकी छवि आपनि मोहिं देखैहोकदाहै।
हे श्रीचन्द्रकले! मेरी नैनन देखन को तरसाई रहा है॥
२९-प्रात समय पर्यंक के ऊपर दम्पति काम कलोल से राते।
नख अङ्कुश चिह्न लगे अँग में सब अँग खुले लिपटे मुसुकाते॥
एक एक वरांग के ऊपर में निज हस्त धरे रस में दोऊ माते।
श्रीचन्द्रकले! अस झाँकी दोऊ के हमें हिय में कबहूं दरसाते॥
३०-मैं जानूँ न ज्ञानन कर्म उपासन और सुसाधन एकहु नाहीं।
यहि काल कराल से तापित हौं बहु प्राय उपाधि लगावत जाहीं
दरशावहु रूप विभव अपनी सखि वेगि विलम्ब सोलावहु नाहीं
मैं त्राहि हौं त्राहिहौं त्राहिकरौं सखि चन्द्रकले! सुप्रत्यक्ष ह्वै जाहीं

दोहा—यह रहस्य एकान्त को, पढ़िहैं जो चित लाय।
श्री चन्द्रकला की कृपा से, पिय प्यारी सुख पाय॥१॥
पढ़िहैं जो नित नेम से, करुणा हिय में लाय।
रूप छटा दरशाइहैं, श्रीचन्द्रकला तेहि आय॥ २॥
रसिकन हित मैं यह कही, नारद स्तव काहि।
को परत्व वर्णन करै, इनकी मया अथाहि॥ ३॥
छूटी अच्छर जोड़िकै, पढ़िहौ अति हरषाय।
'मोद' पाय मन में अती, रखिहौ हृदय लगाय॥ ४॥

स्वामी श्रीसियारामशरणजी महाराजः—

('मधुरी')

सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाष्टकः—

* शार्दूल विक्रीड़ित छन्द *

वन्दे चन्द्रकलां कलोलकरणीं कुन्देन्दु शुभ्राङ्गनाम् ।
सीताराम रहस्य राग रसिकां रागानुगान्दायनीम् ॥
भक्तानाञ्च स्वभीष्ट हेतु प्रथमे कारुण्य रूपार्णवाम् ।
भावाचार्य स्वरूप नित्य प्रमदां यूथेश्वरीमग्रणीम् ॥ १ ॥
रामानन्द पियूष प्रेम सरितां श्रीपूज्य पादाम्बुजाम् ।
माधुर्य्यास्य मृगाक्षिणीम्मृदुस्वरीं रासाग्रगण्याग्रणीम् ॥
शृँगाराख्य स्वरूप धारितवतीं पादाश्रितान् रक्षणीम् ।
त्वां श्रीचन्द्रकले नमामि सततं सीताप्रियां सादरम् ॥ २ ॥
सर्वांशक्तिमनन्त सेवित पदां देवाङ्गना वन्दिताम् ।
वीणा वेणु मृदङ्ग वादनरतां साङ्गीत गीतोद्धृतीम् ॥
रासे हास विलासिनीं सुप्रमुखां रामा मनोहारिणीम् ।
त्वां श्रीचन्द्रकले नमामि सततं सीताप्रियां सादरम् ॥ ३ ॥
चन्द्रा कान्ति प्रजागरीं गुणमयीं चन्द्रप्रभा आत्मजाम् ।
मुग्धां मुख्य सुपालिनीं प्रमुदितां दात्रीमुपाधिस्थिताम् ॥
लब्ध्वा नैव त्वदीय पादविमुखै रासादि क्रीड़ास्थलीम् ।
त्वां श्रीचन्द्रकले नमामि सततं सीताप्रियां सादरम् ॥ ४ ॥

सम्बन्धादि परानुरक्तिममलां भक्ति प्रदां माधुरीम् ।
सीताराम पदारविन्द मधुपां माधुर्य्यमञ्जूज्वलाम् ॥
सौन्दर्य्याम्बुनिधीमनूपकलिकां सीता रसास्वादिनीम् ।
त्वां श्रीचन्द्रकले नमामि सततं सीताप्रियां सादरम् ॥ ५ ॥

ऐश्वर्य्यादि सुमण्डितां रमयतीं रामाभिरामप्रदाम् ।
ते चन्द्रास्य मरीचिका रसमयी सन्तापपापापहाम् ॥
योगीशादि सुवन्दितां मुनिगणैः पाथोजपादालिकाम् ।
त्वां श्रीचन्द्रकले नमामि सततं सीताप्रियां सादरम् ॥ ६ ॥

रामा रूपपरायणीं परतरां तद्रूपरूपेस्थिताम् ।
श्रीमच्चन्द्रमसोमयूख सदृशीं रामाम्बक कौमुदीम् ॥
ध्यानागम्य स्वरूप तत्सुख सुखीं चित्तं प्रियाह्लादिनीम् ॥
त्वां श्रीचन्द्रकले नमामि सततं सीताप्रियां सादरम् ॥ ७ ॥

हेमागार विहारिणीङ्जगतीं कुञ्जाधिपास्वामिनीम् ।
सच्चिद्रूपवतीं सुचारु चरणां चिन्हैर्व्रतां नुपुरैः ॥
योगीन्द्रेन्द्र सुरेन्द्र सिद्धिरनिशं गौरीगिरा सेविताम् ॥
त्वां श्रीचन्द्रकले नमामि सततं सीताप्रियां सादरम् ॥ ८ ॥

श्रीमच्चन्द्रकलाष्टकम्पठति यः सीतेश सन्तुष्टये ।
धामन्ते समुपासते सुखयुतो भावादिभक्तिर्युतः ॥
इत्थं स्त्रोत्र सुमाधुरी रचितवान् स्वस्यात्मनः शान्तये ।
'सीताकान्त' सुस्वामि सद्गुरु कृपा सम्पूर्णतां प्रत्यऽगात् ॥९

अर्थः—स्वामी श्रीसीताकान्तशरण कृपा-कटाक्षाश्रित स्वामी श्रीसियारामशरणजी ('मधुरी') सर्वेश्वरी श्रीचन्द्र--कलाजी की वन्दना करते हैं कि हे मिथिलेश राजनन्दिनीजू की परम प्रेष्ठा (अतिशय प्रिया) लाड़िली सखी, सर्वेश्वरी श्री-चन्द्रकलेजू! मैं आपको सर्वदा नमस्कार करता हूं। आप कुन्द और चन्द्र आभा सम्पन्न अङ्गों वाली, रास-रस विला-सिनी प्रिया-प्रीतम श्रीसीतारामजी की रहस्य लीलाओं की रसिका, प्रीतिपरा, संगीत कुशला हैं। आप भक्तों के मनोरथों को पूर्ण करने में तत्पर, करुणा के समुद्र हैं। हे यूथेश्वरियों में अग्रगण्या सर्वेश्वरीजू! आप नित्य प्रमदा रूप शृँगार भाव की आचार्या हैं। प्राण प्रीतम श्रीरघुनन्दनजू के आनन्दामृत की प्रेम सरिता हैं। आपके चरणारविन्द सदा वन्दनीय हैं। आप शृँगार-रस स्वरूपा, मृग-नैनी, मधुर--भाषिणी, चरणा-श्रितों की रक्षा करने वाली रास रासेश्वरी सर्वेश्वरी हैं ॥२॥

आप सर्वशक्ति स्वरूपा हैं। अनन्त देवाधिदेव तथा देवाङ्गनाओं से आपके चरण कमल वन्दनीय हैं। रास में हास-विलास को बढ़ाने वाली, वीणा-वेणु, मृदंग आदि वादन तथा संगीत में कुशल, आप प्रधान मनोहर रामा हैं। स्वा-मिनी श्रीमिथिलेश राजकिशोरीजी की अतिशय प्रिय सखी हे सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलेजू! मैं सर्वदा आपको आदर पूर्वक नमस्कार करता हूँ ॥ ३ ॥

हे रानी श्रीचन्द्रप्रभाजू की आत्मजा! चन्द्र-किरण को

प्रकाश करने वाली, सर्वगुण सम्पन्ना, मुग्धाओं की मुख्य पालिका, सदा आनन्ददात्री सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलेजू ! आपके चरण कमलों का बिमुखी किसी प्रकार भी रासादि क्रीड़ा-स्थल को नहीं प्राप्त कर सकता। हे सीता प्रिये ! मैं सर्वदा आदर पूर्वक आपको नमस्कार करता हूँ ॥ ४ ॥

सम्बन्ध भेद भाव के द्वारा मधुर भक्ति प्रदान करने वाली, श्रीसीतारामजी के चरणारविन्दों की भ्रमरी, सौन्दर्य सागर की अनुपम कलिका तथा सीता--तत्त्व को यथार्थ जानने वाली हे सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलेजू ! मैं सादर आपको नमस्कार करता हूं ॥ ५ ॥

हे सर्वेश्वरीजू ! आप सर्वैश्वर्य्य सम्पन्न, प्राण-प्रीतम सरकार को भी आनन्ददात्री, रमाने वाली हैं। आपके मुख चन्द्र की रसमयी किरणें सन्ताप पाप को हरण करने वाली हैं। योगीशादि से वन्दित आपके चरण कमलों के भ्रमर, मुनिगण हैं। मैं आपको सर्वदा सादर नमस्कार करता हूँ ॥६॥

परतत्त्व में स्थित श्रीरामरूप परायणारामा आप हैं। प्राण वल्लभ श्रीराघवेन्द्रजू के नेत्र रूपी कुमुदिनी को प्रफुल्लित करने के लिये आप चन्द्रकिरण सदृश हैं। श्रीप्रियाजू के चित्त में अह्लाद बढ़ाने वाली, उनके सुख में सुखी अर्थात् तत्सुखी आप हैं। आपका स्वरूप ध्यानागम्य है। मैं आपको नमस्कार करता हूँ ॥ ७ ॥

हे कनक भवन विहारिणी कुञ्जेश्वरी स्वामिनीजू !

सच्चिद्रूपवती माङ्गलिक चरण चिह्नों तथा नूपुरों से सुशो-भित चरण कमलों वाली ! योगीन्द्र, सुरेन्द्र, सिद्ध, गिरिजा तथा सरस्वती से अहर्निश सेवित हे सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलेजू ! मैं सर्वदा आपको नमस्कार करता हूं ॥ ८ ॥

प्राण प्रीतम श्रीरघुनन्दनजू को प्रसन्नता के लिये जो भक्ति-भाव पूर्वक सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी के इस अष्टक का पाठ करते हैं (करेंगे) उनको सुख पूर्वक अन्त में धाम की प्राप्ति होती है (होगी)। श्रीसद्गुरु-भगवान 'स्वामी श्री-सीताकान्तशरणजी महाराज' को कृपा से श्रीसियारामशरणजी ('मधुरी') के द्वारा (स्वान्तः सुखाय) अपनी आत्मा की शान्ति के लिये इस सर्वेश्वरी अष्टक की रचना हुई ॥ ९ ॥

१—स्वामिनि चन्द्रकला कल मेरी ॥

सुगुण मंडिता रहस पंडिता रसाखंडिता आर्य्य उजेरी । अग्रगन्य अलि मन्य धन्य तर पालक पन प्रपन्न जन-केरी ॥ दिव्य दशा दरसावनि द्युति दिल लेत देत नित मोद घनेरी । निबहौ नेह नात नित 'मधुरी' पद जलजात जात बलि चेरी ॥

२—चन्द्रकला सरदारी हमारी ॥

प्यार पसार सार सुख सौंपति त्रय गुण ताप निवारी । जाकी रुख ताकति सुरभामा ब्रह्म विष्णु त्रिपुरारी ॥

नलिन नवल लोचन भवमोचन श्रीनिमिराज दुलारी।
'मधुरी' सेवत सुलभ होत रस नहिं कछु अगम निहारी।।

३—चन्द्रकला कल रहस प्रकाशी ।।
सुखरासी छबि रूप उपासी वचन रचन मृदु मधुर सुधा सी। सहजानन्द परेश परम प्रभु प्रिया प्रीतम अनुराग विलासी ।। जेहि दिशि तकति तनिक तिरछोहैं तिमिर ताप त्रय तीव्र विनासी। 'मधुरी' काया कल्प करति कल कलिमल कूल कलंक निकासी ।।

४—चन्द्रकला कल ऐनी। सिया प्रिया।
शुभ गुण सुमति सुपैनी। सिया प्रिया ।।
प्रथमा पूज्या परमाचार्य्या प्रेम पयोधि बढ़ैनी। सिया।।
रीति रहस रति रमति रमावति राम रसिक रस दैनी ।। सिया ।। युगल सजीवन हिय बिच विलसत चिंतामणि चित चैनी ।। सिया ।। 'मधुरी' विमल विशद विज्ञा वर मधुर पियूष सुवैनी ।। सिया प्रिया ।।

५—हमारे हिय अग्रअली जू के राज।
चमत्कार चित् चिन्मय चौगुन,
चन्द्रकला अलि आर्य्य ।।
दूसर नहिं सम्राट सुरासुर,
सदृश कहत बड़ि लाज ।

कला कुशल सुन्दर सब भांतिन, बर मंत्री रसराज ॥ पाय प्रपत्ति प्रजागण इन्द्री, निर्भय भई समाज । बिभव बिराट बराट बिचारहु, बिष्णु बिलास न छाज॥ थिति पालन लय होत जहाँ लगि, रुख लखि धरि सिरताज। पाय निदेश अली सब 'मधुरी' करतीं निज निज काज ॥

६—बसो मम नैनन अग्र दुलारी।

श्रीमदग्र सिरताज स्वामिनी सियजू की प्राण अधारी॥ अग्रेशा रति रहस रसेशा चन्द्रकला सुकुमारी। अग्र-रूप गुण अग्र माधुरी अग्र बिभव बिस्तारी॥ रास बिलास सु अग्र रचैता अग्र सु वीना चारी। अग्रगीत संगीत प्रकाशक अग्र शृँगार शृँगारी॥ होली अग्र ठठोली बोली खोली अग्र सुनारी। अग्रकलोल हिंडोल उत्सुकी अग्र झुलावनि वारी॥ अग्र युगल सम्बन्ध कारिणी अग्र आर्य्य अधिकारी। अग्र केलि रस अग्र महल में 'मधुरी' अग्र पधारी॥

७—हमारी स्वामिनी सरदारी।

चन्द्रप्रभा से चन्द्रकला भइ, चन्द मन्द करि डारी॥ दश दिशि कलित कौमुदी फैली, त्रिभुवन ताप बिदारी। कलिमल कठिन कलंक कालिमा कुटिल

रेखतम टारी ॥ श्रीसम्पत्ति सोहाग सुख आकर छबि शृँगार सँवारी। अस को भा शोभा की शोभा, मन लोभा सिय प्यारी ॥ जाकी कृपा कटाक्ष रास रस चाहत अवध विहारी। जाकी चरण रेणु पद्मादिक माँग भरत सुर नारी ॥ जेहि पद पद्म पराग प्रसव अज पद पायो त्रिपुरारी। सोइ रज वन्दि प्रमोद महल की भइ 'मधुरी' अधिकारी ॥

८—बिकी हम चन्द्रकला कर कमल ॥

सखियन सहित करति क्रीड़ा कल सकल भांति सुख सुथल। कियो सनाथ सुसाथ दियो भल रंग राग अति अमल ॥ प्रगटति परम प्रमोद पलहिं पल प्रति-पालन पन प्रबल। 'मधुरी' महल टहल नित न्योसति चहल पहल नहिं दहल ॥

९—बसत हम चन्द्रकला रजधानी ॥

सर्वेश्वरी रूप गुण आगरि नागरि नवल प्रधानी। परम उदार अपार दयानिधि रस शृँगार प्रदानी ॥ मोद महल सानन्द कुँज में रहस केलि मनमानी। नीति प्रीति रस रीति नई लखि रीझे सारंग पानी ॥ विधि हरिहर निज शक्ति सहित जेहि सेवत मन कर्म बानी। 'मधुरी' अभय मगन मन सपने त्रास त्रास नहिं आनी ॥

स्वामी श्रीविदेहजाशरणजी महाराजः—

(श्रीप्रेममोदजी)

१—सहेली सीय की प्यारी । प्रगट भई आज सुखकारी ॥
छठी उत्साह सिय केरी । जनम भो ताहि मधि मेरी ॥
चलो सखी राजके रावल । सजैं सुख साज मन भावल॥
सोहिलो गाय छबि निरखैं । बलइया लेहिं हिय हरषैं ॥
लुटावैं वस्तु संचन की । पुरावैं आश मंगन की ॥
कला जेहि चन्द्र शुभ नामा । अलिन में अग्ररस धामा ॥
रसिक रसराज आचारज । गोप रस केलि में आरज ॥
नवल कल वीन नारद को । सिखाई जितेउ तुम्बरु को ॥
युगल सुख साजि फुलवाड़ी । मिलावत पीय अरुप्यारी॥
प्रेम 'रसमोद' सुखदानी । सु उत्सव जनम को ठानी ॥

२—रंग भीनी बधाई बाजैं री ।
चन्द्रभानुके कुँवरि प्रगट भई गौर वदन छबि भ्राजैंरी॥
जनक नगर सब डगर बगर में फैलि रह्यौ रसराजैं री ।
'प्रेममोद' सिय पिय मन भावन अलिगण में सिरताजैं री ॥

३—चिरजीवो सदा चन्द्रभानु लली ।
रसिकन को अति सुख वरषावैं दर्सावैं रस रंग गली ॥

सुख सुहाग दिन २ अति बाढ़ैं नैहर सासुर रंगरली।
'प्रेममोद' सिय पिय छबि छाके जिमि भँवरी लहि कमल कली ॥

४—जै श्रीचन्द्रकले गुण ऐनी।
अतिशय प्रिय श्रीजनकललीको प्रीतम हिय निवसैनी॥ निन्दति निज छबि मदन विलासिनि मृगनैनी पिक-वैनी ॥ रास रहस कल केलि प्रवीनी सिय प्रीतम रस-दैनी। सेवन हित 'रसराज' युगल पद आस लगी दिन रैनी ॥

(श्रीरामप्यारीशरणजी महाराज)

श्री १०८ श्रीरामदुलारीशरणजी महाराजः—

(श्रीरूपलताजी)

बन्दों श्रीचन्द्रकला सर्वेश्वरि, महलेश्वरि महारानी।
श्रीजनकलली की प्राण पियारी रघुनन्दन सुखदानी॥
जिनके चरण कमल को निशदिन युत्थेश्वरी गणसेवैं।
सहचरी सखी समाज सदा, जिनकी आज्ञाकृत लेवैं ॥ १ ॥

सियजू से छोटी छौ दिनकी, अरु जेठी सबहीं से।
आचारज हूँ के आचारज, तुहीं भईं तवहीं से॥
स्वामिनी बड़ी दाशिका छोटी रीति बड़ों की येही।
इसी नीति से चन्द्रकले! तूँ सेव्य सदा सब सेही ॥ २ ॥

युगल चन्द्रकी कला तुँ तेहिते, चन्द्रकला है नामा।
कला कांति को कहे कांति बिनु, चन्द्रहुँ नहीं ललामा ॥
कला पूर्ण पूणो कहलावे सकल रास रस दानी।
बिना कला को रात अमावस, भयप्रद वेद बखानी ॥ ३ ॥

जरा कला द्विज शशिमें दरसे सबकोई शीश नवावे।
'श्री' चन्द्रकले तेरी महिमा शिव, शेष गणेश न गावे ॥
चन्द्रकला बिनु दर्शन हूं, दुर्लभ शशिका सबही को।
'श्री' चन्द्रकला आचार्य्य विनाकोउ,कसपावेसियपियको॥४

'श्री' अग्राचार्य्यहुं की आचार्य्या तुहीं बात सब जाने।
अष्टयाम भावना पदावली, श्रीमुख स्वयं बखाने ॥
मधुराचार्य्य केलि कादम्बिनि में प्रथमहिं श्लोका।
बन्दन करि निज आचार्य्या को, जानत हैं सबलोका ॥ ५ ॥

हर्य्याचार्य्य 'श्री' जानकी गीत में, महिमा यथा बखानी।
पढ़ सुनकर अपराचार्य्या को, वरण करहिं किमि ज्ञानी ॥
'श्री' रसिकअलीजी रस चन्द्रोदय में स्पष्ट बताए।
सीतासखी अग्रगण्या रसिकाग्राचार्य्य कहाए ॥ ६ ॥

चन्द्रकला शिर भूषण शिव को नाम वदे श्रुतिचारी।
तुही शंकराचार्य्या हैं यह बात की जान अनारी ॥
सखीरूप श्रीशिवजी तुमहीं को निशिवासर सेवैं।
तेरिहि कृपा बनी युत्थेश्वरी सबको आज्ञा देवैं ॥ ७ ॥

धरि अग्राचार्य्यावतार तूँ, राज मार्ग झलकाए।
भुले हुए जिस रस मग को, श्रीयुगल प्रिया प्रगटाए॥
जैसे श्रुति के सेतु हेतु श्रीराम लेत अवतारा।
तैसहि रसिकन सेतु हेतु तुम, आवत बारम्बारा॥ ८॥

अवतारिणी तूँ भरतलालजी के आचार्य्य बखाने।
जिन समान नहिं पात्र दूसरा सब रामायणी जाने॥
कलि में तुलसी सेसुसठनि हठि राम सुसन्मुख दानी।
अवधकांड के अन्तिम छन्द में तुलसीदास बखानी॥ ९॥

जो न होत जग जन्म भरत को सकल धर्मधुरधारी।
भक्ति भावना प्रेमतदाश्रित, कहँ सिखते नर नारी॥
शरणागत लखि नारद मुनि को बीणाचार्य बनाई।
श्रीचन्द्रकले, तेरी करुणा केहि को नहिं मंगलदाई॥ १०॥

चन्द्रकला बिनु अमृत की, बर्षा नहीं होत कहीं है।
पूछ लेहि विज्ञानी से कोउ, जाकर बात सही है॥
तैसहि सीताराम चन्द्र हूँ चन्द्रकले! तव द्वारा।
रस बर्षाय रास दर्शावैं दै रस राज शृँगारा॥ ११॥

रात अन्धेरी में तबही लगी जगमग ज्योति दिखाये।
तारा गण को कौन गिने जब चन्द्रकला नभ छाये॥
अन्धा ही कह सकता है कि चन्द्रकला कछु नाहीं।
याकी लम्पट चोरविनिन्दहिं, जिनहि न ज्योतिसुहाहीं॥१२

चन्द्रकला श्रीचिह्न तिलक के मध्य करे पिय प्यारी।
युत्थेश्वरी सहचरी सखी सब तिलक भाल में धारी॥
श्रीचन्द्रकले! तूँ बिन्दु सहित हैं रामनाम के रूपा।
प्रिया अभेद रूप दूसर तूँ सब शक्तिन्ह शिर भूपा ॥ १३ ॥
जैसे राम नाम बिनु कोई नहिं सद्ग्रन्थ कहावे।
श्रीचन्द्रकले! तव नाम विना नहिं कोइ रसग्रन्थ दिखावे॥
छत्र मुकुट सम राम नाम वर्णों पर यथा विराजे।
प्रणवादि वर्णों पर तैसहि चन्द्रकले! तूँ भ्राजे ॥ १४ ॥
कृपा कोर की ओर निहारत रहे जिन्हे पिय प्यारी।
उनकी महिमा कौन बखानहि बनि जहँ गिरा गँवारी॥
शेष महेश गणेश गिरा नहिं महिमा जानत तेरी।
तूँ हीं कहो श्रीसर्वेश्वरी! तहँ है गिनती कहँ मेरी ॥१५॥
लघु बहिनी की नाते किन्हीं ढिठाई तेरि दुलारी।
धरकर अपने कर में इस स्तुति को पढ़लो प्यारी॥
बहुत जन्म से बनी वियोगिनी करना माफ खता को।
पिय प्यारी के निकट बुलालो, जल्दी 'रूपलता को ॥१६॥

दो०—श्रीरस राज उपासना, करें जो रसिक उदार।
तिनके हित करि अमरचा, यह मोतिन की हार ॥१॥

(सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी की जय)

हूँ श्रीचन्द्रकला सर्वेश्वरि ।
जिनकी कृपा कटाक्ष विलोकत, रहत लोक लोकप लोकेश्वरि ॥१
जिनकी रुचिलखिर वर्तहिं सब,युत्थेश्वरि अलिगण कुञ्जेश्वरि ॥२
'रूपलता' श्रुति विभव कहैं किमि,जेहि वस लालली परमेश्वरि॥३

श्री १०८ श्रीरामदुलारीशरणजी महाराज ।

(श्रीविहारिणीजी)

१—चन्द्रप्रभाजू की वारी हमारी प्यारी ।
चन्द्रभानु की नवल लड़ैती, चन्द्रकला सुकुमारी ।
त्रिभुवन पुण्य थली मिथिलापुर लीलारस विस्तारी ॥
परम पुरातन केलि युगल घन, वरसायो रस वारी ।
भूरि भाग्य तव अहै 'विहारिणी' सद्गुरुप्रद रसभारी॥

२—हमारे माई प्रभा ललीजू के राज ।
जाकी रुख लखि रसिक रसिकनी, सजत सुरसमय साज ॥ कबहुँ युगल युग कर धरि प्रिय के, करन रास रस काज । हा–हा करि कह तू रसदानी, सुफल करहु मन काज ॥ सुनि युग वैन नैन भरि स्वामिनि, मधुर बीन वर बाज । उद्दीपन रस रास करन को, जुरवति सकल समाज ॥ कबहुँ मान रस केलि रचावति, कर नत पिय सिरताज । युगल ललन रसरीति 'बिहारिणि' बिस्तारति रसराज ॥

श्रीसियारामदासीजी कृत

* स्तुति सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाजी की *

जयति जयति चन्द्रकले चन्द्रभानु नन्दनी ॥

सोहत नव गौर गात कोटिन रति लखि लजात।
मन्द मन्द मुस्कुरात प्रीतम हिय चन्दनी ॥ १ ॥

पग तल कर तल सुलाल अधर अरुण छबि सुजाल।
लाजत लखिकै मराल गति गयंदनी ॥ २ ॥

पहिरे वर बसन नील शोभा अतिशय गंभीर।
मनहुँ तड़ित ऊपर घटा घन घमंडनी ॥ ३ ॥

शोभित गर हीर हार अंगद भुज छबि अपार।
कंकण कर बलय धार मुद्रिकादि जटि मनी ॥४॥

चन्द्रिका सु लसत शीश मनहुँ कोटि नखत ईश।
तिमिर संग राजत अद्भुद अनंदनी ॥ ५ ॥

अतिशय कपोल गोल आरसि जनु जुग अमोल।
झूलत ताटंक श्रवण मनहुं द्युति दामिनी ॥६॥

लटकत लट घूंघुरारि सुधा पियत नाग नारि।
शारद मति निरखि हारि उपमा अतूलनी ॥ ७ ॥

शोभित अति कटि सुछीन छुद्र घंटिका नवीन।
मदन कलश जुग उरोज पीन युग नितंबिनी ॥८॥

शोभित सिंदूर भाल अधर मधुर बीरी लाल।
लटकत वेसरि रसाल प्रीतम मन फंदनी ॥ ६ ॥
नूपुर पग मदन यंत्र मोहनि वश करनि मंत्र।
प्राण पीय हीय नैन बाण वेधि डारिनी ॥ १० ॥
बैठी सिय बाम भाग गावति मृदु मधुर राग।
लीन्हें वर वीन हाथ उघटति प्रबन्ध छन्दनी ॥११
सुनि २ दम्पति निहाल बकसत मणि मोति माल।
बार बार तोहि प्रसंश काम फंद फंदनी ॥ १२ ॥
सखियाँ खड़ीं चहूं ओर भृकुटी लखि कै सुतोर।
करति सकल सेवा सिय पिय अनंदनी ॥ १३ ॥
ब्रह्मादिक धरत ध्यान सुर नर मुनि करत गान।
दम्पति हिय की जू प्राण सखियन अनंदनी ॥१४।
प्रेम हिय आस तोर दम्पति सह बसहु मोर।
पाप ताप नाशि सकल विहरहु स्वछंदनी ॥१५॥
प्रगटो निमि कुल सुप्यारि दम्पति सुख देनिहारि।
उमा रमा रती शची विवुध तीय बन्दनी ॥ १६ ॥
निमि कुल मंडन कुमारि गावत यश वेद चारि।
चन्द्रप्रभा चन्द्रभानु कीरति अमंदनी ॥ १७ ॥
कोमल चित अति उदार आश्रित सुख देनिहारि।
निज जन हिय अघ विसारि देन मोद कंदनी ॥१८
लतिका सुप्रेम तोरि दशा दृगन लखहु मोरि।
लीजे अपनाय मोहि पाहि पाहि स्वामिनी ॥१९॥

सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकला--स्तुतिः—

सोरठा—मास सुखद वैशाष, शुक्ल पक्ष तिथि चतुर्दशी।
रसिकन हृदय हुलाश, प्रगट भईं सर्वेश्वरी॥

प्रगटीं सर्वेश्वरि गुण गण सेषरि चन्द्रप्रभा हितकारी।
हरषित महतारी अलि सुखकारी रूप अनूप निहारी॥
लोचन अभिरामा तन बर बामा यंत्र वीण कर धारी।
विधु वदन विशाला गल बिच माला कोटिन रति मदहारी॥
कह दोउ कर जोरी स्तुति तोरी केहि विधि करौं सुस्वामिनि।
रघुवर ललचावनि प्रेम बढ़ावनि तन द्युति कोटिन दामिनि॥
करुणा सुख सागरि सब गुण आगरि चन्द्रकला प्रिय नामिनि।
सखियन हित लागी अति बड़भागी चारु शशी जग जामिनि॥
मनमोहनि माया रस बरसाया रसिक जनन कै चित्त हरैं।
अगतिन गति दायिनि प्रेम बरायिनि तन मन सर्वस विमलकरैं॥
जेहि कृपा विलोकैं करैं विशोकैं सिय सन्मुख तेहि जाय करैं।
उतरैं भवसागर सब गुण आगर प्रेम भक्ति पथ पाँव धरैं॥
विनती सुनि मोरी द्रवहु अथोरी लली रूप दरसाओ।
चन्द्रभानु श्रीचन्द्रप्रभा की ललित लली कहलाओ॥
करि सुखद रुवाई छवि दरसाई कह्यो भयो मन भावो।
मिलि अलिगन गावो शरणहि जावो सिय रघुनाथहि ध्यावो॥

दोहा—श्रीसिय सियपिय केलि हित, करन विनोद अपार।
सिय सहचरी प्रगटत भईं, सर्वेश्वरि सरदार॥

जय जय मम स्वामिनि तन द्युति दामिनि चन्द्रकला महरानी।
निज जन मन भावनि ताप नशावनि दासिनि सब सुखखानी॥
जय सहज प्रकाशिनि भव भय नाशिनि पिय प्यारी रिझवारी।
साकेत निवासिनि चतुर बिलासिनि दम्पति प्राण पियारी॥
जय रास रंगीली जय अलबेली बीन सु सेवा धारी।
जय जयति नागरी अग्र सहचरी बार बार बलिहारी॥
तव चरण नमामी निज अनुगामी करि मोहि शरणहिं लीजै।
जेहि सेवत अलिगन सोइ मृदु चरणन की सेवा सुख दीजै॥
रागादि नसावो सुख उपजाओ अब न अधिक भरमावो।
भव बन्दि छुड़ावो पास बुलावो किंकरि करि अपनावो॥
रसिकन अनुगामिनि करु मोहि स्वामिनि पुनि२ शीश नवाऊँ।
चरणोदक पाऊँ जूठन खाऊँ फूलि न अङ्ग समाऊँ॥
दम्पति पद पंकज को शुभ श्रीरज नित उठि शीश चढ़ाऊँ।
दो वह अनुरक्ती जिससे भक्ती मैं अचलाच्युत पाऊँ॥
अति आरति सब बिधि कहति 'स्नेह' निधि केवल आस तुम्हारी
निज भगिनि बिचारी करहु सुखारी पुरवहु आस हमारी॥

दोहा—सेवइ छल तजि भाव युत, चन्द्रकलहिं जो कोइ।
दम्पति क्रीड़ा केलि सुख, अवसि तासु उर होइ॥

❋ आरती ❋

१—श्रीचन्द्रकलाजू की आरती करिये।
कंचन थार कपूर की बाती,
साजि सुमन तुलसी दल धरिये॥
चमर छत्र मुरछल लै ठाढ़ी,
सखियन को लखि आनंद भरिये।
झाँझ मृदंग करताल बजाओ,
घरी घंट धुनि सुनि मन हरिये॥
सिय सिय पिय की परम दुलारी,
चन्द्रप्रभा लली जय उच्चरिये।
इनकी कृपा कटाक्ष पायके,
'प्रेमनिधी' प्रिय सियबर वरिये॥

२—श्रीचन्द्रकलाजू की कलित आरती कीजै हो।
ललना मुख अरविन्द मलिन्द दृगन रस पीजै हो॥
मंगल मूरति बिन्दु भाल छवि छाजै हो।
ललना वारक देखत दृगन अमंगल भाजै हो॥
अलकैं कुटिल कपोल अतर तर भीनो हो।
ललना मनहुँ मयंक सुदेश शेष शिशु छीनो हो॥
भृकुटी बंक कटाक्ष फूल श्रुति सोहै हो।
ललना ललकि २ रस हेतु चन्द्र मुख चूमैं हो॥

नासा बेसरि अधर कमल दल डोलै हो।
ललना छबि समीप सुत सीप सु दीप कलोलैं हो॥
पहिरे हीरन हार उरोजन भ्राजै हो।
ललना जनु महेश के शीश सुरसरी राजै हो॥
उज्ज्वल उदर उदार त्रिवलि तर सोहै हो।
ललना उठत उमंग तरंग गंग मन मोहै हो॥
कटि लहँगा लहरात चुनरिया चोखी हो।
ललना चुवत सरस रस झीन रसिक मन पोषी हो॥
जंघ जानु कमनीय गुल्फतर गूढ़े हो।
ललना जेहरि रतन जड़ाव सुभाव अरूढ़े हो॥
यावक युत पद पद्म लालिमा छाई हो।
ललना लजि २ ऊषा शाम शरण तकि आई हो॥
'मधुरी' अदा अनूप वरणि नहिं जाई हो।
ललना भक्ति परा रसरूप रसिक सुखदाई हो॥
ताकि २ तृण तोरि मोरि मुसुकाई हो।
ललना वारि वारि जलपान करति ललचाई हो॥

श्री १०८ श्री पं० अवधकिशोरदासजी महाराज कृत

(श्रीप्रेमनिधिजी)

सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलाष्टकः—

१—श्रीचन्द्रकला सर्वेश्वरि स्वामिनि मेरी ।
दीजै निज दर्शन देवि करहु नहिं देरी ॥
तुम्हरी करुणा बिनु द्रवत न जनक दुलारी ।
करुणा निधान नहिं मिलैं श्रीअवध बिहारी ॥
तेहि ते तव द्वार पड़्यो बिनवत दुख भारी ।
कीजै करुणामयि कृपा दृष्टि सुखकारी ॥
सिरमौर सदा सखियन को श्रुतियन टेरी ।
श्रीचन्द्रकला सर्वेश्वरि स्वामिनि मेरी ॥
२—अति बिकल विरहबश भई विदेह कुमारी ।
लाई प्रमोद वन सहित श्रीप्रीतम प्यारी ॥
मेट्यो दुख दारुण भेंटि पिया भई धन्या ।
सर्वेश्वरि पद तब दियो सिरध्वज कन्या ॥
पिय प्यारी मिलावनि है विरुदावलि तेरी ।
श्रीचन्द्रकला सर्वेश्वरि स्वामिनि मेरी ॥
३—रचि रास बसन्त विहार छयो ऋतु रूरी ।
सब साज सजत प्रिय प्राण सजीवन मूरी ॥

करि दूरि मान रस रंग उमंग बढ़ाओ।
तेहि ते सब सखियन सहित दम्पतिहिं भावो॥
बनि उमा रमा ब्रह्माणि चहति पद चेरी।
श्रीचन्द्रकला सर्वेश्वरि स्वामिनि मेरी॥

४—नहिं भक्ति प्रेम नहिं धर्म नेम कछु कीन्हों।
सपनेहु नहिं संत समागम मँह पग दीन्हों॥
निशि बासर पाप प्रचंड भयानक भायो।
कबहूँ नहिं प्रीतम प्यारि हृदय में ध्यायो॥
मति हो गई थोर कठोर विषय रस घेरी।
श्रीचन्द्रकला सर्वेश्वरि स्वामिनि मेरी॥

५—न जानो पुण्य प्रताप कहाँ ते जाग्यो।
सम्बन्ध सरस शुचि श्रीसियजू सों लाग्यो॥
श्रीजनक नगर में जनमि दरश तव पायो।
लखि ललित लाड़िली बहिन ते लाड़ लड़ायो॥
पुनि पाय देह सब भूलि गयो मति फेरी।
श्रीचन्द्रकला सर्वेश्वरि स्वामिनि मेरी॥

६—अब एक बार फिर अपनो दरश दिखाओ।
श्रीलली लाल की रीति रहस्य सिखाओ॥
करि दूरि महा भ्रम पूरि स्नेह सुख दीजै।
श्रीचन्द्रकला निज चरण शरण मोहि लीजै॥

नहिं और याचना मोरि कहत हौं टेरी ।
श्रीचन्द्रकला सर्वेश्वरि स्वामिनि मेरी ॥

७—रसिक शिरोमणि दम्पति संपति मोरी ।
तेहि त्यागि करत मैं सुख हित अगणित चोरी ॥
तव कृपा कोर जब परै अधमता जावै ।
प्रभु नाम रूप लीला निवास नित भावै ॥
पुनि २ नहिं होय बिषय रसिका मति मेरी ।
श्रीचन्द्रकला सर्वेश्वरि स्वामिनि मेरी ॥

८—जब तक सम्बन्ध नहीं तव होवे ।
तब तक दुःख भोग न मिटै मलिन मन रोवे ।
यह सद्गुरु संत सुशास्त्र सदा शुचि गावै ।
ते धन्य २ जो नर तव आश्रित पावै ।
यह 'प्रेमनिधि' को गान मंगलमय हैरी ।
श्रीचन्द्रकला सर्वेश्वरि स्वामिनि मेरी ॥

श्रीप्रियापरतन्त्राय श्रीजानकीवल्लभाय नमः

श्रीमत्यै आचार्य्यायै नमः

लोमश संहितान्तर्गतः

अथ श्रीमती सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलायास्तवः

साकेतपत्तनविलासविनोदशीलां
सौदामिनीशतसहस्रविनिन्द्यशोभाम् ।
श्रीमैथिलेन्द्रनगरीजनपूर्णसिन्धौ
प्रोल्लासदां हि किल चन्द्रकलां नमामि ॥ १ ॥

यस्याः प्रभा लोकपतींश्च लोकान्
बाह्यान्तरं भासयते सुचित्रम् ॥
आश्चर्य्यरूपां च विलासदत्तां
रामेष्टदां चन्द्रकलां प्रपद्ये ॥ २ ॥

वन्दे चन्द्रकलां शरच्छशिमुखीं शोणारविन्देक्षणां
भक्तानां भयनाशिनीं करुणया सङ्कल्पसिद्धिप्रदाम् ॥
श्रीरामेष्टकरीं स्वयं जनकजावामे सदा संस्थितां
सर्वाशापरिपूरणीं विजयते देवीं भजे शर्मदाम् ॥ ३ ॥

अरुणनलिनशोभाजित्वरे पादपद्मे
नखरनिकरकान्त्या निर्जितश्चन्द्रबिम्बः ॥
जघनयुगलमेतत्स्तम्भगर्वं कदल्या—
विजयकरणदक्षं प्रीतिपात्रं प्रियस्य ॥ ४ ॥

मृगपतिकटिहारी किङ्किणी नूपुरादि-
क्वणितध्वनिमनोज्ञः पूर्णपीनो नितम्बः ॥
उदरमृदुलरेखासंयुता रोमराजि-
र्विलसति यमुनाभा नागकुण्डोपरिस्था ॥ ५ ॥

उरसि मधुरमध्ये वर्तुलाकाररम्ये
वहसि रुचिविताने पुष्टवक्षोजयुग्मे ॥
कनककलसभासे दैर्घ्यकाठिन्ययुक्ते
हरसि हृदयतापं प्रेयसः कामजातम् ॥ ६ ॥

कनकगिरिवरे वा ध्याननिष्ठौ गिरीशौ
सरससरसि कोकौ श्रीफले वाप्यपूर्वे ॥
अजितमकरकेतोः कन्दुकौ क्रीडनाय
भवदुरसि किमेतौ शोभमानावुरोजौ ॥ ७ ॥

कलितललितग्रीवा भूषणानां च राजिः
प्रियतमकरलग्ना भाति विद्युल्लताभा ॥
नवलकनकमल्लीवल्लिपुष्पैः प्रकीर्णा
तव जनितमनोजप्रेयसः प्रीडनाय ॥ ८ ॥

कनकरचितभूषावस्त्रनीलोत्तरीयै-
र्विलसन्नवमल्लीकञ्जकिञ्जल्कजालैः ॥
मधुकरवरवृन्दैर्भूरिसौगन्ध्यलुब्धै-
र्हरसि हृदयसारं प्राणनाथस्य तूर्णम् ॥ ९ ॥

सघननवबनान्ते दिव्यकूले सरय्वा
विविधमणिसुकुञ्जे स्वप्रियाङ्के विभासि ॥
तरुणतरुतमाले विद्युदाभेऽतिदीप्त्या
प्रियतमहृदि मध्ये चन्द्रभे चन्द्रभासे ॥ १० ॥
नभसि निविडमेघासंवृते कुञ्जमध्ये
सखिगणपरिवीते गायतीभिर्मृदङ्गैः ॥
क्वणितध्वनिविताने स्वप्रियाङ्के लसन्ती
शमय हृदयतापं सत्वरं तुङ्गवक्षे ॥ ११ ॥
शरच्छशाङ्काभमुखेन्दुमण्डले
प्रफुल्लपङ्केरुहचारुलोचने ॥
श्रीचन्द्रविम्बाभकपोलमण्डले
बन्धूकपुष्पाधरदर्पखण्डने ॥ १२ ॥
विद्युच्छटानिन्दितदन्तपङ्क्त्या
तिरस्कृतेन द्वितये मृदुस्मिते ॥
केशावलीसञ्चितवेणिका च
सर्पीव पुष्पेषु विभाति पृष्ठे ॥ १३ ॥
मृणालजित्पद्मकरौ सुलक्षणौ
त्रैलोक्यराज्यश्रियदायकौ परौ ॥
वीणान्वितौ चांगुलिचालनाञ्चितौ
प्रदर्शयस्वात्ममिदं सुविग्रहम् ॥ १४ ॥
हंसीव गच्छसि यदा परिनर्त्तनेषु

मत्तेभवत्समुपतिष्ठसि रङ्गमध्ये ॥
सिंहीव भासि सखिमण्डलयूथमध्ये
द्रक्ष्ये कदाहमतिशोभन भावदीप्ताम् ॥ १५ ॥
रुचिरप्रियतमेन कन्दुकैः क्रीडनाय
चपलतरदशायां लग्नसङ्कीर्णकेशम् ॥
मदमुदितकपोलं भावसञ्जातहासं ।
मम मनसि प्रतिष्ठेद्रूपमेतत्त्वदीयम् ॥ १६ ॥
वीणाप्रवादेन प्रियं वशंकरी
तदेव त्रैलोक्यजयंकरी सदा ॥
रहस्यभण्डारिणि सर्वदायिके
प्रियाप्रियायाश्च प्रसाददे शुभे ॥ १७ ॥
तव प्रसादेन विनैव साधनात्
प्रलभ्य जीवो हि प्रियस्य सङ्गमम् ॥
रहस्यलीलादिशुभाधिकारी
भवेद्विनायासमयत्नतश्च ॥ १८ ॥
त्वाहं भजे चन्द्रकले कृपार्णवे
यूथेश्वरीणां निखिलैककारिणीम् ॥
सर्वाधिकारस्य प्रदायिनी परे
नतोऽस्मि मे देहि प्रियेष्टदर्शनम् ॥ १९ ॥
प्राणप्रियायाश्च सुमानदायिनी
प्राणप्रियेणापि सुखप्रदायिनी ॥

स्वकीयचातुर्य्यवलेन सत्वरं
विमुच्य मानं ह्यु भयोः समागमम् ॥ २० ॥
स्वभासया दामिनिवृन्दसन्तते-
र्विनिन्द्यशोभां रतिमानमर्दिनीम् ॥
श्रीस्वामिनीं राजकुमारवल्लभां
भजाम्यहं चन्द्रकलां परेश्वरीम् ॥ २१ ॥
जानाति कोऽस्या हि परत्वमद्भुतं
ब्रह्मादिदेवैरपि गोपितं महत् ॥
योगीश्वराणामपि भावनास्पदं
राजेन्द्रपुत्रस्य विमोहकारकम् ॥ २२ ॥
अप्राकृतं प्राकृतभाववर्जितं
महोत्तमं रासरसं महत्तरम् ॥
तव प्रसादेन विना न लभ्यते
भजामि त्वां चन्द्रकलां रसेश्वरीम् ॥ २३ ॥
तव प्रसादेन विना रघूत्तमो
न मैथिली चापि प्रसीदति ध्रुवम् ॥
यस्याः कटाक्षेण भवेत् परेप्सितं
भावैकगम्यं रसराजविग्रहम् ॥ २४ ॥
यदाज्ञया श्रीगिरिजा सरस्वती
विधाय रूपाणि विमोहनानी ॥
विधीशविष्णुप्रमुखाः स्वलीलया
वशीकृताश्चन्द्रकले प्रसीद मे ॥ २५ ॥

प्रियेण सार्धं करकन्दुकं यदा
प्रोच्छालयन्ती गगने कराभ्याम् ॥
उरोजमालक्ष्य तदा प्रियस्य
हर्तुं मनो दिव्यमनोजकन्दुकम् ॥ २६ ॥
भवत्यसौ मोहविमूढचेतसा
दासेव साक्षाद्भुवनैकभर्त्ता ॥
पराजितश्चाशु तव प्रशंसा
करोति 'हे देवि ! जयस्त्वदीयः' ॥ २७॥
रामोऽपि त्वत्कोककलां निरीक्ष्यह
सम्भूय चित्रेव प्रशंसितो मुहुः ॥
दृष्टुं न कोके निखिलं पुरा त्विदं
तवाङ्गजं सर्वमिति सुखार्णवे ॥ २८ ॥
तवास्मि मे देहि रहस्यमेत—
च्छ्रीराजपुत्रो रसिकेश्वरश्च ॥
उवाच तां चन्द्रकले प्रिये त्वां
दास्यामि तत्ते मनसेप्सितं यत् ॥ २९ ॥
तत्त्वं त्वदीयं निगमैरगम्यं
प्रवर्णितुं कोऽपि न चास्ति लोके ॥
प्रसीद मे दर्शय स्वात्मरूपं
मां पाहि पाहीति जगाद नारदः ॥ ३० ॥

श्रीशिव उवाचः—

इदं रहस्यं परमं कथितं सुव्रते मया ॥

अत्यन्तं परमं गोप्यं रसिकानाञ्च जीवनम् ॥ ३१ ॥
यः पठेच्छृणुयाद्वापि श्रावयेद्रसिकाग्रणी ॥
स एव राघवं पश्येत् साङ्गं तद्रासमण्डले ॥ ३२ ॥
इति श्रीमती सर्वेश्वरी श्रीचन्द्रकलास्तवराजः समाप्तः

अथ कृपाकटाक्ष स्तोत्रम् ।

मुनीन्द्र वृन्द वन्दिते त्रिलोक शोक हारिणि
प्रसन्नवक्त्र पंकजे निकुँज भूविलासिनि ॥
विदेह भूप नन्दिनि नृपेन्द्र सूनुसंगते
कदाकरिष्यसीह मां कृपाकटाक्ष भाजनम् ॥ १ ॥
अशोक वृक्ष वल्लरी वितानमण्डपस्थिते
प्रवाल जाल पल्लव प्रभा रुचांघ्रि कोमले ॥
वराभयस्फुरत्करे प्रभूत सम्पदालये
कदाकरिष्यसीह मां कृपाकटाक्ष भाजनम् ॥ २ ॥
तडित्सुवर्ण चम्पक प्रदीप्त गौर विग्रहे
मुखप्रभा परास्त कोटि सारदेन्दु मण्डले ॥
विचित्र चित्र संचरच्चकोर साव लोचने
कदा करिष्यसीह मां कृपाकटाक्ष भाजनम् ॥ ३ ॥
अनंग रंग मंगल प्रसंग भंगुर भ्रुवा
सुविभ्रमस्तु संभ्रम दृगन्त वाणपातनैः ॥
निरन्तरं वशीकृतावधेश भूपनन्दने
कदा करिष्यसीह मां कृपाकटाक्ष भाजनम् ॥ ४ ॥

मदोन्मदादियौवने प्रमोद मान मण्डिते
प्रियानुरागरंजिते कलाविलास पण्डिते ।।
अनन्य धन्य कुँजराजि कामकेलि कोविदे
कदाकरिष्यसीह मां कृपाकटाक्ष भाजनम् ।। ५ ।।

विशेष हाव भाव धीर हीर हाशभूषिते
प्रभूत सातकुम्भ कुम्भ कुम्भि कुम्भ सुस्तनि ।।
प्रसस्त मन्दहास्य पूर्ण पूर्ण सौख्य सागरे
कदा करिष्यसीह मां कृपाकटाक्ष भाजनम् ।। ६ ।।

मृणाल वालवल्लरी तरंग रंग दोलिते
लताग्र लास्य लोल नील लोचना विलोकने ।।
ललल्लुलन् मिलन्मनोजमुग्धमोह माश्रजे
कदाकरिष्यसीह मां कृपाकटाक्ष भाजनम् ।। ७ ।।

सुवर्ण मल्लिकांचिते त्रिरेख कम्बु कण्ठगे
त्रिसूत्रमंगुलीगुणाभिरत्नदूर दीप्यते ।।
सलील नील कुन्तले प्रसून गुच्छ गुम्फिते
कदा करिष्यसीह मां कृपाकटाक्ष भाजनम् ।। ८ ।।

नितम्ब बिम्ब लम्बमान पुष्पमेखलागुणे
प्रशस्त रत्न किंकिणी कलापमध्यमंजुले ।।
करीन्द्र सुण्डदण्डिका वरोरूसौ भगोरके
कदाकरिष्यसीह मां कृपाकटाक्ष भाजनम् ।। ९ ।।

अनेक मंजु नाद मंजुनूपुरारवस्खले

सुराजराज हंश वंश निःक्रणा तिगौरके ॥
विलोल हेमबल्लरी बिडम्ब चारु चक्रमे
कदाकरिष्यसीह मां कृपाकटाक्ष भाजनम् ॥ १० ॥
अनन्त कोटि विष्णु लोक नम्रपद्मजार्चिते
हिमाद्रिजा प्रलोमजा विरंचिजा वरप्रदे ॥
अपार सिद्धि बृद्धि दिग्ध सत्पदांगुली नखे
कदाकरिष्यसीह मां कृपाकटाक्ष भाजनम् ॥ ११ ॥
मखेश्वरी क्रियेश्वरी सुधेश्वरी सुरेश्वरी
त्रिवेद भारतेश्वरी प्रमाणशाशनेश्वरी ॥
रमेश्वरी क्षमेश्वरी बिनोदकामनेश्वरी
प्रमोदकाननेश्वरी विदेहजे नमोस्तुते
कदा करिष्यसीह मां कृपाकटाक्ष भाजनम् ॥ १२ ॥
इतीदमद्भुतं स्तवं निशम्यभूमि नन्दिनी
करोति सन्ततं जनं कृपाकटाक्ष भाजनम् ॥
भवत्वनेक संचित त्रिरूप कर्म नाशनम्
भवेत्तथा नृपेन्द्र सूनु मन्दिरं प्रवेशनम्
कदाकरिष्यसीहमां कृपाकटाक्ष भाजनम् ॥ १३ ॥

श्रीजानकी रसिक कुञ्ज (सीतामढ़ी) की सेवाः—

चन्द्रकला कल लाड़ लड़ावै। अमित भांति सेवा सुख पावै ॥
कबहुँ हिंडोर सुरंग झुलावै। कबहूँ विपिन प्रमोद घुमावै ॥
मणिमय नाव बनाय सुअद्भुत, श्रीलक्ष्मण मधि खेल खेलावै ॥
कबहुँ गीत संगीत उघटि रस, रंगभरी पिय संग नचावै ॥

शशि शर्बरी शरद अवलोकति, कबहुँ लाय उरताप सिरावै ॥
कबहुँ जुवा युग जोरी जोरति, जानकी जीतन युक्ति जनावै ॥
सुख अथाह अवगाह मगन ह्वै, कबहुँ उछाह बिबाह रचावै ॥
करि २ केलि कुतूहल कौतुक, कबहुंक हौंसन हुलसि हँसावै ॥
कबहूँ हेरति होस हेरावै, हुलसि २ हिय हौंस पुजावै ॥
वन रसवन्त लसन्त सुमन तरु, मिलि सिय कंत वसंत मनावै ॥
कबहूँ फाग खेलावै गावै, रंग राग अनुराग बढ़ावै ॥
कबहूँ अङ्गराग अङ्ग लेपति, चंदन चरचि चारु चित चावै ॥
कबहुँ चरित्र पवित्र सिया के, बाल विचित्र केलि गुन गावै ॥
कबहुँ उसीर सुगंधित बंगला, रचि शुचि सुमन सदन पधरावै ॥
कबहूँ सुमन विभूषण रुचिर, सिय सिय वल्लभ अङ्ग पहिरावै ॥
कबहूं ललित लाड़िली लालन, ललकि लखति लोचन ललचावै ॥
विशद विहार विनोद विविधि बिधि, बसुबासर बिनु विघ्न बितावै
द्वादस मास आश वर "मधुरी" दम्पति पास खास सुख पावै ॥
सिय स्वामिनि अनुगामिनि भामिनि सबसखियन रसरीतिव्रतावै

❋ पद ❋

चन्द्रकला चित चोरी हो रामा चतुर पिया के।
फाग खेलाय छकाय रंग रस गाय बजाय हथोरी हो रामा ॥ चतुर० ॥ पियहिं ओढ़ाय सुपीत पिछौरी बेष बनाय सुगोरी हो रामा ॥ चतुर० ॥ कंठ लगाय खवाय पान को बिहँसि बिठाय अँकोरी हो रामा ॥ चतुर० ॥ रंग बोरी मुख मोरी "मधुरी" छवि बिलोकि तृण तोरी हो रामा ॥ चतुर पिया के० ॥

अनन्त श्रीरसरङ्गमणीजी महाराज कृत

'श्रीजानकी यशावली' का एक "उद्धरण":-

दोहा—सखी सदा की सेविका, सीता अंश स्वरूप।
जनमीं वहु निमिवंश मँह, तिन मँह अष्ट अनूप॥
चारुसुशीला लक्ष्मणा, सुभगा मदन कलाम।
चन्द्रकला विमला कृपा, कमलादिक छबि धाम॥३७॥